ओ३म्

# आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 31 अगस्त 2025

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 31 अगस्त 2025 से 06 सितम्बर 2025

भाद्रपद शु. 08 ● वि० सं०-2082 ● वर्ष 66, अंक 35, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 201 ● सृष्टि-संवत् 1,96,08,53,126 ● पृ.सं. 1-12 ● मूल्य - 5/- रू. ● वार्षिक शु. 300/- रू.

## डी.ए.वी. सैक्टर-6, सीडीए, कटक में सात दिन तक चला वनमहोत्सव

डी.ए.वी., सीडीए के प्रांगण में सात दिवसीय वनमहोत्सव का आयोजन किया गया। विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती नमिता मोहंती ने बिगड़ते पर्यावरण से धरती का तापमान बढ़ने से मनुष्य जीवन, पेड़–पौधों, जीव–जंतुओं पर पड़ रहे बुरे असर का खुलासा करते हुए इस आयोजन का उद्देश्य स्पष्ट किया। प्राचार्या ने कहा वन महोत्सव के अन्तर्गत पर्यावरण की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए आज हमें ज़्यादा से ज़्यादा पेड़ लगाने की आवश्यकता है। बच्चों एवं शिक्षकों ने साथ मिलकर अभिभावकों में एवं स्कूल के आस–पास वृक्षों का वितरण किया। विद्यालय

प्रांगण एवं आस–पास के क्षेत्रों में 556 वृक्ष लगा कर इस कार्यक्रम में सभी ने अपनी उत्साहपूर्वक भागीदारी दिखाई।

इस अवसर पर विद्यालय में तरह–तरह के क्रियाकलापों एवं प्रतियोगिता जैसे–पोस्टर मेकिंग, वाद–विवाद, बीजों के द्वारा आकृति बनाओ, चित्रकला, कविता लेखन आदि का आयोजन किया गया। विद्यार्थियों एवं शिक्षकों द्वारा 'पेड़ लगाओ, जीवन बचाओ' के नारे के साथ प्रत्येक वर्ष 1000 पेड़ लगाने का भी संकल्प लिया गया।

## आर्यसमाज सैक्टर 16डी चंडीगढ़ में मनाई गई श्रीकृष्ण जन्माष्टमी

आर्यसमाज सेक्टर 16डी चंडीगढ़ में श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर्व धूम–धाम से मनाया गया।

कार्यक्रम का आरम्भ सात कुण्डीय हवन–यज्ञ के साथ हुआ। आर्यसमाज के प्रधान डॉ. बी सी जोसन जी द्वारा उपस्थित सदस्यों और अतिथियों

का स्वागत किया गया। महाविद्यालयों एवं विद्यालयों से आए विद्यार्थियों एवं अध्यापकों द्वारा भजन और ज्ञानवर्धक वक्तव्य दिए गए।

डॉ. विजय भारद्वाज ने कर्मयोद्धा श्रीकृष्ण जी के स्वरुप के बारे में बताया। श्री जितेंद्र मुंजाल ने संयम और समर्पण के बारे में वक्तव्य दिया। आचार्य परमवीर ने महर्षि दयानंद द्वारा किये पाखण्ड खण्डन और वेदों की ओर लोटने के आह्वान की चर्चा की। डॉ. विक्रम विवेकी जी ने कृष्ण शब्द का अर्थ समझाया। मुख्यातिथि श्री रमेश चंद्र जीवन जी ने प्रस्तुत किए गए भजनों को सराहा। उन्होंने आप्त पुरूष कर्मयोगी कृष्ण जी के जीवन का अनुसरण करने के लिए कहा। डॉ. सीमा कंवर और श्रीमती अनुजा शर्मा ने आर्यजनों का धन्यवाद किया।

कार्यक्रम सम्पन्न शान्तिपाठ एवं ऋषि लंगर के साथ सफलतापूर्वक हुआ।

## एल.आर.एस. डी.ए.वी. अबोहर द्वारा वेद प्रचार और सेवा कार्य

एल.आर.एस. डी.ए.वी. विद्यालय के छात्रों ने वेदप्रचार सप्ताह में बृहद् यज्ञ का आयोजन किया। यज्ञोपरान्त योगाचार्या श्रीमती पूनम जाखड़ ने

योगाभ्यास कराया और योगासनों की सही विधि से बच्चों, अध्यापक वर्ग एवं कर्मचारियों को अवगत कराया व योग का महत्त्व दर्शाया।

विद्यालय द्वारा आयोजित सामाजिक सेवा के कार्यक्रम में बच्चों ने गऊशाला एवं वृद्धाश्रम संस्थानों का भ्रमण किया और गौ पालन क्यों करना चाहिए, जैसे विषयों की गहन जानकारी अर्जित की।

बच्चे वृद्धाश्रम गए, वहाँ बुजुर्गों की स्थिति जाँची, परखी, उनसे वार्तालाप किया, उनके अनुभव सुने, उनकी कठिनाई व रहन–सहन पर विस्तृत चर्चा की।

प्राचार्या महोदया ने बच्चों व स्टॉफ को वेद प्रचार सप्ताह का महत्त्व व उपयोगिता बताई तथा सप्ताह की सफलता के लिए सभी का धन्यवाद किया। वैदिक शिक्षा और सेवा के महान पर्व का शान्ति पाठ से समापन हुआ।

जो सब जगत् के पदार्थों को संयुक्त करता और सब विद्वानों का पूज्य है और ब्रह्मा से लेके सब ऋषि मुनियों का पूज्य था, है और होगा, इससे उस परमात्मा का नाम **'यज्ञ'** है। क्योंकि वह सर्वत्र व्यापक है। स. प्र. समु. १

**{संपादक – पूनम सूरी}**

ओ३म्
# आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 31 अगस्त 2025 से 06 सितम्बर 2025

## बड़े-छोटे सबको नमः

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

**नमो महद्भ्यो नमो अर्भकेभ्यो नमो युवभ्यो नम आशिनेभ्यः।**
**यजाम देवान् यदि शक्नवाम, मा ज्यायसः शंसमा वृक्षि देवाः।।**

ऋग् 1.27.13

ऋषिः **आजीगर्तिः शुनः शेषः।** देवता **विश्वेदेवाः।** छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● (**महद् भ्यः नमः**) [ज्ञान और गुणों में] महानों को नमः (**अर्भकेभ्यः नमः**) छोटों को नमः, (**युवभ्यः नमः**) युवकों को नमः, (**आशिनेभ्यः नमः**) वयोवृद्धों को नमः। (**यदि शक्नवाम**) जहाँ तक [हम] समर्थ हों (**देवान्**) विद्वानों को (**यजाम**) सत्कृत करें। (**देवाः**) हे विद्वानों! (**ज्यायसः**) अपने से बड़े के (**शंसं**) स्तवन को [मैं] (**मा आवृक्षि**) न छोड़ूँ।

●मनुष्य सामाजिक प्राणी है। उसे अन्यों के प्रति अभिवादन आदि उचित शिष्टाचार का पालन करना होता है। मैं भी बड़े छोटे सबको अभिवादन करता हूँ; कृत्रिम और दिखावटी नहीं, किन्तु अन्तर्मन से 'नमः' करता हूँ। 'नमः' का मूल अर्थ है झुकना। झुकना सिर से भी होता है, मन से भी। राजा, राज्याधिकारी, माता, पिता, गुरु, अतिथि, साधु, संन्यासी, शिशु, कुमार, विद्यार्थी, युवक, वृद्ध, स्वामी, सेवक प्रत्येक से मिलने पर हृदय में जो आदर, श्रद्धा, प्रेम, आशीर्वाद आदि के भाव उत्पन्न होते हैं, वे सब 'नमः' के अन्दर समाविष्ट हैं। अतः अभिवादन के लिए वैदिक 'नमस्ते' शब्द अत्यन्त हृदय-ग्राही और उपयुक्त है। जब छोटे बड़े को 'नमस्ते' कहने में पारस्परिक सौहार्द और एक-दूसरे की उन्नति की कामना व्यक्त होती है। साथ ही 'नमः' में केवल शुभकामना ही नहीं, प्रत्युत बड़े-छोटे सबके प्रति कर्तव्य-पालन का भाव भी निहित है।

हे राष्ट्र के विद्यावृद्ध और गुणवृद्ध महान् नर-नारियों! हे उपदेशामृत-वर्षा से जनता को तृप्त करनेवाले वीतराग संन्यासियो! हे विद्वच्छिरोमणि तपोनिष्ठ वानप्रस्थ आचार्यो! हे देश के लिए प्राणों का उत्सर्ग करने को उद्यत महावीरों! हे जनता-जनार्दन की सेवा में तत्पर महापुरूषों! 'तुम्हें नमः'। हे निश्छल भावभंगियों और बाल-क्रीड़ाओं से मन को मुदित करने वाले अबोध शिशुओं! हे अल्पवयस्क कुमारो! हे गुरु के अधीन विद्याध्ययन में रत तपस्वी, व्रती ब्रह्मचारियों! तुम्हें 'नमः'। हे अपने संकल्प-बल से भूमि आकाश को झुका देनेवाले बली, साहसी, ओजस्वी, विजयी युवको! तुम्हें 'नमः'। हे परिपक्व, धीर, गम्भीर, अनुभवी, धन्य, वन्दनीय, वयोवृद्ध जनो! तुम्हें 'नमः'।

समस्त बालक, युवक, वृद्ध मेरे अर्चनीय देव हैं। जहाँ तक सम्भव होगा, मैं इन्हें स्नेह-सत्कार दूँगा, इनकी सेवा करूँगा। यह भी ध्यान रखूँगा। यह भी ध्यान रखूँगा कि जो मुझसे बड़े हैं, उनकी शंसना में, उनके उपकार के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन में मुझसे कोई त्रुटि न हो।

❑

**वेद मंजरी से**

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

## तत्त्वज्ञान

● महात्मा आनन्द स्वामी

तीनों शरीरों की बात चल रही थी। स्थूल और सूक्ष्म शरीरों की चर्चा के बाद कारण शरीर के बारे बताते हुए स्वामी जी ने बताया कि मनुष्य जब सुषुप्ति-अवस्था में आ जाता है तो उस समय केवल कारण शरीर में कार्य होता है।

आत्मा तीनों शरीरों से अलग है। यह जीवात्मा है क्या ? यह प्रश्न उठाकर बताया कि शरीर का संघात जिसके लिए बना है उसी को जीवात्मा कहते है। शरीर के साथ इसका संबन्ध मोक्ष प्राप्ति के लिए है। आत्मा सदा एक रस है और ज्ञानवान है। साधक ध्यानावस्था में स्वयं को प्रकृति-विकृति से अलग जानकर आनन्दधाम की ओर बढ़ता है। सत् चित् आनन्द स्वरूप ब्रह्म से मिलकर सत् चित् स्वरूप जीवात्मा आनन्द को प्राप्त होता है। जीवात्मा को इसी तत्त्व की खोज करनी है क्योंकि शरीर तो मरणधर्मा है। शरीर में रहता हुआ यह जीव सुख-दुःख में पड़ा रहता है। सच्चिदानन्द ब्रह्म से मिलकर सुख-दुःख का स्पर्श भी नहीं रहता और आनन्द का भण्डार सदा के लिए खुल जाता है।

ब्रह्म तत्त्व केवल तार छेड़ देता है। जीवात्मा और प्रकृति के 24 तत्त्व खेल खेलने लगते हैं। ब्रह्मतत्त्व केवल द्रष्टा बना रहता है। यह सर्व व्यापक है।

आत्मा तत्त्व और ब्रह्म तत्त्व का मिलाप तत्त्वज्ञान का फल है। पंचभूतों के विवेक से ही उस सत्य को जाना जा सकता है।

स्वामी जी ने बताया कि आनन्द की सम्पत्ति ब्रह्मतत्त्व के पास है। मैं आत्मा हूँ, वह मेरा सहयोगी है। यह आनन्द न तो पंचभूतों में है न ही प्रकृति में। आनन्द केवल ब्रह्मतत्त्व की मित्रता से ही प्राप्त हो सकती है।

विवेक ख्याति से प्रभु कृपा जब तक प्राप्त न हो जाए तब तक प्रभु भजन, सत्संग और स्वाध्याय निरन्तर करते रहे। **..... अब आगे**

### पंच भूतों की माया

शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध-ये सब आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथिवी इन पाँचों भूतों के गुण हैं। इन पाँचों भूतों के ये पाँच गुण जब तीन गुणों सत्-रजस्-तमस् से मिलते हैं तो नाना प्रकार के हो जाते हैं। साधक ने यह यत्न करना है कि इन पाँचों भूतों और इनके गुणों पर दृष्टि रखकर सत्त्व की ओर जाना है परन्तु यह सरल कार्य नहीं है। अनुभव में यह आया है कि पंच भूतों की माया इतनी विचित्र और अद्भुत है कि इनका ज्ञान प्राप्त करने के यत्न प्रारम्भ होते हैं तो यह माया अपने अनेक रूप, प्रलोभन, चमत्कार दिखलाकर ज्ञान प्राप्त करनेवाले ही को अपने वश में करना चाहती है। जीव उन प्रलोभनों में फँसकर तदनुकूल कर्म करने लगता है। नाना दुःखों की सृष्टि सामने आ जाती है। भगवान् राम ने संसार के जिन दुःखों का वर्णन किया है वे इसी प्रकार उत्पन्न होते हैं। इन दुःखों को जीव स्वयं ही उत्पन्न करता है और फिर स्वयं ही उनसे दुःखी होकर पुकारता भी है।

### तीन प्रकार के दुःख

संसार में दुःखों की गणना कठिन है परन्तु उनके तीन विभाग किये जा सकते हैं-(1) आध्यात्मिक, (2) आधिभौतिक, और (3) आधिदैविक।

1. **आध्यात्मिक दुःख**-रोगादि द्वारा, चोट इत्यादि से शरीर में उत्पन्न होनेवाला और काम-क्रोधादि से मन में पैदा होनेवाला दुःख।
2. **आधिभौतिक**-विषैले जीव-जन्तुओं या व्याघ्रादि से उत्पन्न दुःख।
3. **आधिदैविक**-अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प, नदियों इत्यादि से उत्पन्न दुःख।

इन तीन प्रकार के दुःखों से जीव पीड़ित होते हैं और चाहते हैं कि किसी प्रकार इनसे छुटकारा मिल जाए।

### एक भूख का दुःख ही अभी तक नहीं मिटा

भूख और प्यास भी एक दुःख है। इसी एक दुःख को दूर करने के लिए आप ज़रा दृष्टि-विस्तार करें तो यही कहेंगे कि केवल इसी एक दुःख ही

का अन्त नहीं होता। भूमि को उपजाऊ बनाने से लेकर अन्न को घर में लाने तक कितना परिश्रम, कितनी चिंता और कितना कष्ट सहन करना पड़ता है ? सारा संसार इसी धन्धे में तो लगा है। परन्तु इतने परिश्रम के पश्चात् परिणाम यह कि प्रातः खाओ तो सायं को आकर भूख फिर दुःखी कर देती है, सायं को खाओ तो प्रातः काल फिर खाने ही का प्रबन्ध करना पड़ता है। यह क्रम जन्म–जन्मान्तर से चल रहा है। युग व्यतीत हो गये, सृष्टियाँ बनीं और बिगड़ीं परन्तु अभी तक भूख के दुःख की अत्यन्त निवृत्ति का कोई भौतिक साधन मनुष्य को प्राप्त नहीं हुआ। शेष जो अनेक दुःख हैं, उनमें से एक दुःख को दूर करने का यत्न करते–करते दूसरा, तीसरा, चौथा दुःख सामने आता–जाता है। मनुष्य समझता है कि मेरी यह चिन्ता दूर हो जाए तो फिर मैं निश्चिन्त हो जाऊँगा, परन्तु पहली चिन्ता दूर होती है तो दो और आ घेरती हैं। कई महानुभावों को यह कथन करते सुना है कि मेरा पिछला घाटा पूरा हो गया तो मैं सुखी हो जाऊँगा। मेरी कन्याओं का अच्छे परिवारों में विवाह हो गया तो फिर मैं सुखी हो जाऊँगा। फिर भी ऐसे लोगों को कभी यह अवसर नहीं मिला कि वे यह कह सकें–अब वे सुखी हो गए हैं।

## भारतवासी दुःखी–के–दुःखी

भारतवासी विदेशी राज्य में कहते थे कि इस अंग्रेज़ से पीछा छूट जाए, हमें स्वराज्य मिल जाए तो हम सुखी हो जाएँगे। अंग्रेज़ के चले जाने के पश्चात् भारतवासियों ने देखा कि कितनी ही और समस्याएँ सामने उपस्थित हो गईं जिन्होंने भारत को अधिक दुःखी कर दिया। यह जीवन–यात्रा तो पर्वत यात्रा की तरह है। हिमालय पर्वत का यात्री एक घाटी पर चढ़ रहा है। श्वास फूल रहा है, फिर भी चल रहा है कि बस, इस घाटी के शिखर पर अब पहुँचने ही वाले हैं, तब कष्ट समाप्त हो जायेगा। पर शिखर पर पहुँचते ही सामने और शिखर दृष्टिगोचर होने लगता है। क्या इसके ऊपर भी जाना होगा ? हाँ, यात्रा अभी समाप्त तो नहीं हुई। अगले शिखर के पश्चात् पुनः और पर्वत, पुनः और शिखर। इसी प्रकार जीवन–यात्रा में एक चिन्ता, एक आवश्यकता, एक दुःख दूर हुआ और दूसरा सामने आ खड़ा हुआ।

किसी प्रकार के भी दुःख की पूर्णतया निवृत्ति नहीं होती। आत्मा नहीं चाहता कि दुःख आये, परन्तु आ ही जाते हैं। जीव दुःखों के कारण पाप को भी करना नहीं चाहता, परन्तु हो ही जाते हैं। यह बात 'महाभारत' में दुर्योधन कह रहा है :

**जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिर्जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः।**
**केनापि देवेन हृदि स्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।।**

'मैं धर्म को खूब पहचानता हूँ पर धर्म में मेरी प्रवृत्ति नहीं होती। मैं अधर्म को भी भली प्रकार जानता हूँ पर मैं उससे बच नहीं सकता। वास्तव में बात तो यह है कि कोई देवता मेरे हृदय में मेरा मालिक बना बैठा है। वह जैसा चाहता है, वैसा मुझे नाच नचाता है।'

वेद भगवान् में भी भक्त शिकायत करता है :

**ओं वि मे कर्णा पतयतो वि चक्षुर्वी३ दं ज्योतिर्हृदय आहितं यत्।**
**वि मे मनश्चरति दूर आधीः किं स्विद् वक्ष्यामि किमु नू मनिष्ये।।**

ऋ. 6.9.6।।

'मेरे कान विरुद्ध आचरण करते हैं। मेरी आँखें विरुद्ध आचरण करती हैं। मेरे हृदय में स्थित ज्योति भी विरुद्ध आचरण करती है। मेरा मन दूर–दूर विचरण करता है। मैं अपने परमेश्वर को क्या उत्तर दूँगा ?"

## क्या दुनिया बुद्धिपूर्वक नहीं बनी ?

फिर क्या यह दुनिया दुःखों ही के लिए बनाई गई है ? क्या भगवान् ने प्रकृति को इसीलिए गति दी थी कि जीव दुःखों ही से पीड़ित रहें ? क्या परमात्मा का सामर्थ्य बुद्धिपूर्वक नहीं था ? ऐसी बात नहीं है, भगवान् तो ज्ञानस्वरूप है। उसका कोई भी कार्य ज्ञान और बुद्धि के विपरीत नहीं, उसके हर काम में पूरा विज्ञान, पूरा नियम और पूरी समझ है। वेद, उपनिषद्, दर्शन तथा दूसरे शास्त्र तो यह आदेश देते ही हैं।

पश्चिमी विद्वानों में न्यूटन (Sir Iasac Newton) से लेकर लॉर्ड कालवन (Lord Kalven) तक ये सारे उच्चकोटि के वैज्ञानिक यही स्वीकार करते हैं कि संसार की रचना संसार–रचयिता की बुद्धिपूर्वक रचना का परिणाम है। **[Science and Religion by Seven Men of Science, P. 32.]** इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध वैज्ञानिक (Scientist) डॉक्टर फ्लेमिंग (Dr. J.A. Fleming) ने लिखा है–"जगत् में उद्देश्य, नियम, स्थिरता, निर्देशक–शक्ति की सत्ता, बोधगम्यता आदि सब गुण पाये जाते हैं।" उन्होंने एक उदाहरण भी दिया है, जिसमें बतलाया गया है कि सारी सृष्टि किस प्रकार नियमपूर्वक कार्य कर रही है। वे लिखते हैं, "प्रत्येक ग्रह का अन्तर सूर्यमण्डल से दूसरे की अपेक्षा बराबर लगभग द्विगुण होता चला गया है। यदि पृथिवी का सूर्य से अन्तर एक सौ मील कल्पना कर लिया जाए तो सूर्य से सम्बन्धित मुख्य ग्रहों की सूर्य से दूरी इस प्रकार होगी :– (1) बुध 39, (2) शुक्र 72, (3) पृथिवी 120, (4) मंगल 120, (5) बृहस्पति 520, (6) शनिश्चर 950, (7) अरुण (यूरैनस) 1920, (8) वरुण (नेपचून) 3000। ये अङ्क लगभग द्वि गुण होते हैं। यह आकस्मिक घटना नहीं है किन्तु इससे नियन्ता का नियम जो सृष्टि रचने में पाया जाता है, प्रकाशित हो रहा है।" **[Science and Religion by Seven Men of Science, P-P., 31-56.]**

## फिर दुःख क्यों ?

जब भगवान् ने सृष्टि बुद्धिपूर्वक और पूरे नियम से बनाई है तो फिर दुःख को दूर करने के प्रयत्न क्यों सफल नहीं होते और दुःख नित्यप्रति बढ़ते ही क्यों

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

# चंद्रसिंह गढ़वाली

कोटद्वार में झंडा चौक के निकट पेशावर कांड (1930) के क्रांतिकारी चंद्रसिंह गढ़वाली की प्रतिमा है। पतलून कमीज, आँखों पर मोटा चश्मा और सिर पर हैट, जो आजीवन उनकी पहचान बना रहा। पहाड़ियों की तरह बोलने का उनका लहजा खासकर उनकी बेलाग बातें और जीने का फकीराना ढंग। वर्ष 1972 में वे एक 'बार 'शहीद मेला' का उद्घाटन करने शहर शाहजहाँपुर आए, पेशावर की पल्टन में रहते हुए उन्होंने देश की आजादी के निहत्थे आंदोलनकारियों पर गोली चलाने से इनकार करने की बड़ी सजा पाई। वह उस दौर की सबसे बड़ी अहिंसक लड़ाई थी।

वे गढ़वाल के दूधातोली में सैणसेरा, पट्टी चौथान के रहने वाले थे। वहाँ पढ़ाई–लिखाई का कोई अर्थ नहीं था। चंद्रसिंह को भी स्कूल नहीं भेजा गया, पर वे अपनी कोशिशों से थोड़ा पढ़ना–लिखना सीख गए। घर की कमजोर आर्थिक स्थिति के चलते वे भागकर फौज में भर्ती हो गए। 'गांधी टोपी' और आर्य समाज उनकी जिंदगी के हिस्सेदार हो चुके थे। क्रांतिकारियों का संग्राम उन्हें आकर्षित ही नहीं, उद्वेलित भी कर रहा था। पेशावर का उस दिन का सवेरा इतिहास–निर्माण की बाट जोह रहा था। खान अब्दुल गफ्फार खाँ के नेतृत्व में खुदाई खिदमत्गार तैयार हो रहे थे। 23 अप्रैल, 1930 को हड़ताल हो गई थी। कांग्रेस का जुलूस निकल रहा था, जिसकी तरफ सिपाहियों की बंदूकें थी। रिकेट ने हुक्म दिया, 'गढ़वाली, थ्री राउंड फायर।' लेकिन हवलदार चंद्रसिंह चीखकर बोले, 'गढ़वालियों! गोली मत चलाना।' चंद्रसिंह के फैसले ने इतिहास को सुर्ख रूप दे दिया। अब वे 'हीरो' बन चुके थे–देशभक्त विद्रोही और गढ़वाली टुकड़ी के महानायक, उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। मुकदमे में उनके वकील बने मुकुंदीलाल। उन्हें जो सजा मिली, वह थी 1. जिंदगी भर काला पानी, 2. सारी जायदाद जब्त, 3. ओहदेदारी से उतारकर सिपाही दर्जे में रखना और 4. सिपाही से नाम काटकर खारिज कर देना। वे कैदी बनकर जेल की तरफ चल दिए। सलाखों के भीतर वे कट्टर कम्युनिस्ट बने। गांधी–इर्विन समझौते के बाद जेल अधीक्षक ने उन्हें बुलाकर एक प्रार्थनापत्र पर दस्तखत कराना चाहा, जिसमें लिखा था, 'गांधी–इर्विन समझौते से सारे कांग्रेसी कैदी छोड़ दिए गए हैं। मैं आइंदा ऐसा अपराध नहीं करुँगा। मुझे माफ कर दिया जाए।' चंद्रसिंह ने कहा कि मैं माफी माँगकर रिहा नहीं होना चाहता। मैं हथकड़ी–बेड़ी से नहीं डरता। उन्हें बरेली सेंट्रल जेल भेज दिया गया। चंद्रसिंह ने जेल में बहुत लड़ाई लड़ी। वर्ष 1937 में उत्तर प्रदेश में कांग्रेसी मंत्रीमंडल बनने पर भी वे नहीं छूटे। जवाहर लाल नेहरु जेल में उनसे मिलने आए। वे नैनी और लखनऊ की जेलों में भी रहे। नेहरु समेत सभी उन्हें 'बड़े भाई' कहने लगे थे। 26 सितंबर, 1941 को 11 साल, तीन महीने और 18 दिन बाद जब वे रिहा हुए, तब गढ़वाल में जाने की बंदिश के साथ राजनैतिक व्याख्यान न देने की हिदायत भी थी। ऐसे में वे कहाँ रहते ! नेहरु ने जेल से उन्हें लिखा कि कुछ दिन 'आनंद भवन' में जाकर रहो। पर वहाँ भी वे ज्यादा टिके नहीं। गांधी ने एक दिन मिलने पर पूछा, 'तुम्हें खर्च वर्च की जरूरत होगी ?' चंद्रसिंह ने कहा, 'बापू, मेरे हाथों में ताकत है। मैं अब जेल से बाहर हूँ, घास काटूँगा, अपना खर्च चला लूँगा।'

आजाद हिंदुस्तान में चंद्रसिंह को अनेक कष्ट उठाने पड़े। वे कोटद्वार के ध्रुवपुर में रहने लगे थे। एक अक्तूबर, 1979 को दिल्ली के एक अस्पताल में निधन के बाद उनकी इच्छानुसार उन्हें 'लाल झंडा' ओढ़ाया गया।

**स्वामी गुरुकुलानन्द 'कच्चाहारी'**
**पिथौरागढ़ (उत्तराखण्ड)**
**'इतिहास के बिखरे पन्ने' से साभार**

*आर्यसमाज के 150 वर्ष पूरे होने पर विशेष*

# देश की पुकार

● पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति

जिस समय गुरु से आशीर्वाद लेकर दयानन्द ने कार्यक्षेत्र में पाँव धरा, आर्य जाति की दशा उस समय मुक्त कण्ठ से चिल्ला–चिल्ला कर कह रही थी कि मुझे एक वैद्य की ज़रूरत है। भारत देश अज्ञान, पराधीनता, शत्रु और दुःखों के कारण सर्पों और काँटेदार झाड़ियों से भरे हुए खाण्डव वन के समान दुर्गम और बीहड़ हो रहा था। उसे आवश्यकता थी एक अर्जुन की, जो एक ओर अरणियों की रगड़ से आग निकाल कर दावानल को प्रज्जवलित करे और दूसरी ओर आग बुझाने का यत्न करने वाले देवों और असुरों के आक्रमणों का उत्तर दे सके। आर्य जाति की दुर्दशा उस समय एक सुधारक को बुला रही थी– एक ऐसे परखैये को बुला रही थी जो उसके पीड़ित अंगों पर शान्ति देने वाला हाथ रख सके। हम दिखलायेंगे कि उस दुर्दशा का स्वरूप क्या था और यह बतलायेंगे कि ऋषि दयानन्द ने उस दुर्दशा के सुधारने का क्या उपाय किया।

ईसा की 10वीं शताब्दी तक भारत में जो उलट–फेर होते रहे, उनका वृत्तान्त हम पहिले खण्ड में सुना चुके हैं। उसके पश्चात् 11वीं शताब्दी के आरम्भ में मुसलमानों का भारत पर पूरा आक्रमण प्रारम्भ होता है। इस्लाम का आक्रमण भारत पर राजनैतिक नहीं था। **वह आक्रमण प्रधानतया धार्मिक था,** राजनीतिक राज्य उसका केवल आनुषंगिक फल था। इस्लाम की तलवार भारत को मुसलमान बनाने आयी थी। आकर देखा तो शिकार को निर्बल पाया। छिन्न–भिन्न भारत थोड़े ही यत्न में राजनीतिक पराधीनता में आ गया। तलवार का असली उद्देश्य भारत को धार्मिक दृष्टि से सर करना था। यह निश्चय से कहा जा सकता है कि उद्देश्य में इस्लाम को काफी सफलता नहीं प्राप्त हुई। कारण यह कि जहाँ भारत कई सदियों तक पराधीन रह कर भी अपनी सम्मिलित राजनैतिक शक्ति को मुसलमानों की राजनीतिक शक्ति के विरोध में खड़ा न कर सका, वहाँ उसने प्रारम्भ से ही अपने धार्मिक संगठन को समयानुकूल परिवर्तित करके आत्मरक्षा के लिए खड़ा कर दिया था।

मुसलमानी शासन के सुदीर्घ काल में भारत के धर्म में हमें जो उतार–चढ़ाव दिखाई देते हैं, वे दो प्रकार के हैं– एक ओर बाह्य आक्रमण को रोकने के लिए खाइयाँ खुद रही थीं, दूसरी ओर कई स्थानों पर एक विश्वव्यापी सिद्धान्त में इस्लाम और हिन्दू धर्म को सम्मिलित करने के प्रयत्न हो रहे थे। इन दोनों ही में हमें बाहर का असर दिखाई देता है। सतीप्रथा, पर्दा, खान–पान के बन्धन, जाति के कड़े विभाग, छूत–छात– वे बाड़ें थीं जिनका उद्देश्य इस्लाम से भारतीय धर्म की रक्षा करना था। सदियों तक भारतीय धर्म इस्लाम के प्रभाव को रोकने के लिए चेष्टा करता रहा और इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि **जैसी असफलता धार्मिक दृष्टि से उसे भारत में हुई वैसी कहीं नहीं हुई।**

**ज़ंजीरों से बँधा हुआ धर्मः–** परन्तु जो बाँध इस्लाम की गति को रोकने के लिए बन रहे थे, वे हर प्रकार से लाभदायक ही सिद्ध नहीं हुए। उन्होंने शुद्ध हवा का प्रवेश रोक दिया, उन्नति और विकास के लिए गुंजायश न छोड़ी और धर्म के बलवान् प्रवाह को ऊँचे किनारों से घेर कर काई, मच्छर और कीचड़ का घर बना दिया। शत्रु के धावे को रोकने के लिए शहर के निवासी चारों ओर खाई खोद लेते हैं, ऊँची दीवार चुन देते हैं, बाहर जाना–आना रुक जाता है। शत्रु अन्दर न आ सके परन्तु शहर के निवासी भी बाहर नहीं जा सकते। उन्नति रुक जाती है, खाना–पीना कम हो जाता है, महामारी पड़ जाती है। यदि कोई नगर अपनी रक्षा भी करनी चाहे, तो उसके लिए एक ही मार्ग है। वह किले से निकल कर शत्रु पर जा टूटे और उसे मार भगाए। दुर्भाग्य से उस समय हिन्दू धर्म में जान नहीं थी, वह आत्मरक्षा में लगा रहा, इस्लाम पर प्रत्याक्रमण करने का उसने विचार नहीं किया। फल यह हुआ कि घर में महामारी पड़ गई। **19वीं शताब्दी के मध्य में हम भारत के असली धर्म को जंज़ीरों से बँधा हुआ, दीवारों से घिरा हुआ, और शहतीरों से दबा हुआ पाते हैं।**

मुसलमान–काल के अन्तिम भाग में, अकबर की उदार धर्मनीति के प्रभाव से कुछ ऐसे यत्न हुए जिनका उद्देश्य धर्म के विश्वरूप को आगे रखकर हिन्दू–मुसलमान के भेद को मिटाना था। भक्त कबीर ऐसे यत्न करने वालों में से मुख्य थे। कबीर के शिष्य उनके सिद्धान्त का वर्णन निम्नलिखित शब्दों में करते हैं–

**सब से हिलिये सब से**
**मिलिये सब का लीजिये नाऊँ।**
**हांजी हांजी सबसे कीजिये**
**बसे आपने गाऊँ।।**

भक्त कबीर के वचनों से ज्ञात होता है कि वह धर्म के व्यापक रूप में भेदों को किस प्रकार तिरोहित करना चाहता था। कबीर के शिष्य बुल्ला साहब ने अपने झूलने में यह कविता लिखी है–

**जहं आदि न अंत न मध्य है**
**रे जहं अलख निरंजन है मेला,**
**जहं वेद कितेब न भेद है रे,**
**नहि हिंदु तुरक न गुरु चेला।**
**जहं जीवन मरन न हानि है रे,**
**अगम अपार में जाय है खेला,**
**बुल्लादास अतीत यों बोल**
**यारी सतगुरु सत शब्द देला।।**

मारवाड़ के भक्त दरिया साहिब ने हिन्दू–मुसलमान दोनों को एक ही पलड़े में डाल दिया है–

**मुसलमान हिन्दू कहा,**
**षट् दरसन रंक राव।**
**जन दरिया निज नाम**
**बिन सब पर जन का दाव।।**

दूलनदास जी अपने झूलने में कहते हैं–

**हिन्दू तुरक दुई दीन आलम,**
**आपनी ताकीन में।**
**यह भी न दूलन खूब है**
**कर ध्यान दशरथनन्द का।।**

**{यह फारसी शब्द तलकीन होना चाहिये जिसका अर्थ अनुरोध–सत्प्रेरणा है। 'जिज्ञासु'}**

वही कवि सत्तनाम में वेद के विषय में कहते हैं–

**तीन लोक तो वेद बखाना, चौथ**
**लोक का मर्म न जाना।**

भक्तराज धरनीदास जी कहते हैं–

**एक धनी धन मोरा हो।**
**जा धन ते जन भये धनी बहु**
**हिंदू तुरक कटोरा हो।**
**सो धन धरनी सहजहि पावौ**
**केवल सतगुरु के निहौरा हो।**

कबीर तथा अन्य भक्तों का यह यत्न चाहे कितना ही उत्तम था, परन्तु उसमें सफलता नहीं, न होने का कारण स्पष्ट है। भक्त लोग दो ऐसे धर्मों को मिलाना चाहते थे, जिनके मिलने में दो बड़ी–बड़ी रुकावटें थीं। पहली रुकावट राजनीतिक थी। मुसलमान विजेता थे, हिन्दू विजित थे। जहाँ एक ओर विजेता विजित के धर्म को तुच्छ मान कर उसके साथ सन्धि करने को उद्यत नहीं होता, वहाँ विजित जाति यदि इतिहास और आत्माभिमान रखती हो तो कभी विजेता के धर्म को स्वीकार करने के लिए उद्यत नहीं होती। राजनीतिक पराजय से गए हुए आत्मसम्मान को वह धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में चौगुने हठ के साथ सँभालने का यत्न करती है। **कबीर और उसके साथियों की असफलता का दूसरा कारण यह हुआ कि वे ऐसे दो धर्मों को मिलाना चाहते थे जो मौलिक रूप से भिन्न हैं, जिनकी आधारभूत कल्पनाएँ ही जुदा–जुदा हैं।**

मिलाने के यत्न निष्फल हुए। हिन्दूधर्म ने प्रत्याक्रमण करने का यत्न न करके आत्मरक्षा के लिए खाई पर खाई खोदी, दीवार पर दीवार चुनी। यहाँ तक कि दम घुटने लगा, उचित भोजन के अभाव से ढाँचा ढीला होने लगा, अंग–से–अंग जुदा हो गया। हारे हुए, घिरे हुए, भूखे किले में सदा फूट पड़ जाया करती है। हिन्दू धर्म के घिरे हुए किले में भी फूट पड़ गई। परिणाम में अनगिनत मत और सम्प्रदाय उत्पन्न हो गए जिनकी अधिक संख्या का अनुमान इसी से लग सकता है कि वैष्णव, शैव और शाक्त इन तीन बड़े पन्थों में से **केवल वैष्णव के ही निम्नलिखित 20 सम्प्रदाय थे** जो एक–दूसरे को झूठे मानते और कहते थे–

(1) श्री सम्प्रदाय, (2) वल्लभाचारी, (3) मध्वाचारी या ब्रह्म सम्प्रदाय, (4) सनकादिक सम्प्रदाय या नीमावत (5) रामानन्दी या रामावत, (6) राधावल्लभी, (7) नित्यानन्दी, (8) कबीरपन्थी, (9) खाकी, (10) मलूकदासी, (11) दादू पन्थी, (12) रामदासी, (13) सेनाई, (14) मीरोबाई, (15) सखीभाव, (16) चरणदासी, (17) हरिश्चन्द्री, (18) सधनापन्थी, (19) माधवी, (20) वैरागी और नागे संन्यासी।

**शैवों के 7 बड़े भेद थे–**

(1) संन्यासी दण्डी आदि, (2) योगी, (3) जंगम, (4) ऊर्ध्वबाहु, (5) गूदड़, (6) रुखड़, (7) कड़ा लिंगी।

**शाक्तों के बड़े भेद निम्नलिखित थे–**

(1) दक्षिणाचारी, (2) वामी, (3) कानचेलिये, (4) करारी, (5) अघोरी, (6) गाणपत्य, (7) सौरपत्य, (8) नानकपन्थी, (9) बाबालाली, (10) प्राणनाथी, (11) साध, (12) सन्तनामी, (13) शिवनारायणी, (14) शून्यवादी, **{आर्य दर्पण जून 1880 ई.}**

तालिका यह दिखाने के लिए उद्धृत की गयी है कि 19वीं शताब्दी के मध्य में हिन्दू धर्म का ढाँचा किस प्रकार बिगड़ चुका था, भेद बेढब बढ़ गए थे, अनाचार पूरे ज़ोर पर था। धर्म की प्रेरिका शक्ति जाती रही थी।

भारत का प्राचीन आर्य धर्म इस सड़ाँध की दशा में था जब देश पर चौथे विदेशी तूफान का आक्रमण हुआ। यूरोपियन जातियाँ आखेट भूमि की टोह

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

# दूर करके हर बुराई को भलाई दीजिये

● आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार

**ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव।**
**यद् भद्रं तन्न आ सुव।।1।।**
यजु. अ. 30 मं. 3।।

इस मन्त्र का ऋषि–नारायण, देवता–सविता और छन्दः–गायत्री है। यह मन्त्र महर्षि स्वामी दयानन्द को अत्यन्त प्रिय प्रतीत होता है तभी तो वे यजुर्वेद का भाष्य करते हुए प्रत्येक अध्याय के आरम्भ में सर्वप्रथम इसी को लिख कर अपना भाष्य आरम्भ करते हैं। आइये, इस मन्त्र पर थोड़ा विचार करते हैं।

**अन्वयार्थः – (सवितः देव)** हे सब जगत् को उत्पन्न करने वाले उत्तम गुण, कर्म, स्वभावों में प्रेरणा देने वाले दिव्य गुणों के भण्डार परमेश्वर ! **(विश्वानि दुरितानि परासुव)** तू हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को दूर कर और **(यत् भद्रम्)** जो कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं **(तत् नः आसुव)** वह हमें चहुँ ओर से प्राप्त करा।

इस मन्त्र में उपासक प्रभु से प्रार्थना करता है, हे सविता देव ! तू हमारे सभी दुरितों को दूर कर और जो भद्र है, वह हमें प्राप्त करा।

संसार में तीन प्रकार के व्यक्ति होते हैं। एक वे होते हैं जो संसार की इन बुराइयों को बुराइयाँ ही नहीं मानते। उनका कहना यह है कि ये सब कर्म तो मनुष्य के स्वाभाविक कर्म हैं अतः इनके करने में कोई पाप नहीं है, बुराई नहीं है। दूसरे वे लोग हैं जो इन दुर्गुणों को तो दुर्गुण मानते हैं और यह भी अनुभव करते हैं कि इन दुर्गुण–दुर्व्यसनों के कारण ही हमारा निरन्तर पतन हो रहा है। वे यह भी मानते हैं कि हमारे दुःखों का कारण भी यही दुर्गुण ही हैं, परन्तु ऐसे व्यक्ति हृदय से चाहते हुए भी इन दुर्गुण–दुर्व्यसनों से अपने को पृथक् नहीं कर पाते हैं। वे यह भी जानते हैं कि ये दुर्गुण–दुर्व्यसन ऐसे नहीं हैं कि जिनसे पृथक् नहीं हुआ जा सके; क्योंकि उन्होंने संसार में ऐसे महापुरुष देखे हैं जो इन दुरितों से ऊपर उठे हुए हैं और इससे वे हमारी अपेक्षा अधिक सुखमय, शान्तिमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। ये हैं देवजन, उत्तम जन, जिन्होंने अपने को इन दुर्गुणों से पृथक् करके अपने को सुखी शान्त और पवित्र बनाया है।

इस प्रकार ये मध्यम कोटि के मनुष्य जो इन दुर्गुणों के कारण अपने को हीन अनुभव करते हैं, वे इस अवस्था से ऊपर उठने के लिए देवों का, उत्तम मनुष्यों का आश्रय भी लेते हैं। उनसे उन को निरन्तर धैर्य, सान्त्वना और उत्साह भी मिलता रहता है। इस प्रकार वे निरन्तर ऊपर उठते रहते हैं परन्तु उन के जीवन में एक दिन ऐसा भी आ जाता है कि जिनको देखकर वे समझते थे कि ये दूध के धुले हुए ही नहीं अपितु गुणों के भण्डार भी हैं, उन में भी उनको शनैः–शनैः दुर्गुण भासने लगते हैं। तब तो उन को उन से भी घृणा–सी हो जाती है और फिर वे उन से भी आगे बढ़ कर उस देवाधिदेव परमेश्वर का आश्रय लेते हैं जिस की कृपा से वे देव दिव्य और पवित्र हुए थे या महान् बने थे। ये वे देव हैं जिस में अपवित्रता का लेश भी नहीं है, सब प्रकार से यह दिव्य है, द्युतिमान् है ज्योतिर्मय है। इस देवाधिदेव की कृपा से ही सब देव ज्योतिर्मय हैं, द्युतिमय हैं। यह देव पवित्रतम है। इसी का सम्पर्क पाकर सब पवित्र बनते हैं अतः हमें भी इसी की शरण में जाना चाहिए और अपने आपको पवित्र बनाने का प्रयास करना चाहिए।

इस प्रकार वह उस परम देव प्रकाशमय प्रभुदेव का सच्चा उपासक बन जाता है। उसे उसकी शरण में जाकर पूर्ण विश्वास हो जाता है कि अब मेरे सब दुरित दूर हो जाएँगे, हृदय की सब कालिमा धुल जायेगी और फिर इस देवाधिदेव प्रभुवर के सम्पर्क से मैं भी देव बन जाऊँगा।

उस परमदेव से वह प्रार्थना करता है–'हे देव ! तू हमारे सब दुरितों को दूर कर और जो भद्र है, वह हमें प्राप्त करा।' उपासक को ज्ञात है कि ये दुरित ही हैं जो मुझे इस जगत् में दुर्गति–दुरवस्था को प्राप्त कराते रहते हैं। अतः वह दुर्गुणों से बचने के लिए पूर्ण प्रयत्न करता है। और फिर वह उस प्रभुदेव से प्रार्थना भी करता है, तभी तो उसके दुर्गुण धीरे–धीरे दूर होते जाते हैं। अब ज्यों–ज्यों उस के दुर्गुण दूर होते जाते हैं, त्यों–त्यों वह निर्मल– पवित्र होता चला जाता है।

अब प्रश्न यह है कि दुरित क्या हैं ? और हम इन्हें कैसे– कैसे पहचानें ? तो इसका उत्तर यह है कि जो यह दुरित शब्द है, इसी में ही यह व्याख्यात है कि दुरित क्या है। दुरित–दुः.इत, दुः=दुख, इत=प्राप्ति, अर्थात् जिस कार्य के करने के पश्चात् परिणाम में हमें दुःख की प्राप्ति होती हो, वह दुरित है। इस प्रकार जिस भी कार्य के करने से परिणाम में हमें दुःख मिले, हमारी दुर्गति हो, वह दुरित हुआ। अब वह चाहे अध्ययन हो, खाना हो, पीना हो, सोना हो, जागना हो, चलना हो, फिरना हो, बात करना हो, चोरी करनी हो या सीना जोरी करनी हो, कुछ देना हो वा लेना हो आदि–आदि।

**अब प्रश्न यह है कि दुरित क्या हैं ? और हम इन्हें कैसे- कैसे पहचानें ? तो इसका उत्तर यह है कि जो यह दुरित शब्द है, इसी में ही यह व्याख्यात है कि दुरित क्या है। दुरित-दुः.इत, दुः=दुख, इत=प्राप्ति, अर्थात् जिस कार्य के करने के पश्चात् परिणाम में हमें दुःख की प्राप्ति होती हो, वह दुरित है। इस प्रकार जिस भी कार्य के करने से परिणाम में हमें दुःख मिले, हमारी दुर्गति हो, वह दुरित हुआ। अब वह चाहे अध्ययन हो, खाना हो, पीना हो, सोना हो, जागना हो, चलना हो, फिरना हो, बात करना हो, चोरी करनी हो या सीना जोरी करनी हो, कुछ देना हो वा लेना हो आदि-आदि।**

इस प्रकार अत्यधिक स्वाध्याय भी यदि परिणाम में हमें आँखों की ज्योति से और शारीरिक स्वास्थ्य आदि से वंचित करे तो वह भी दुरित है, भले ही वह वेद शास्त्रादि का स्वाध्याय ही क्यों न हो और स्वल्प स्वाध्याय भी हमारे जीवन का अंग बन कर हमें शरीर से स्वस्थ, मन से शान्त तथा आत्मा से तृप्त करने वाला है तो वह सुपरिणामी होने से भद्र है।

(क्षीर) खीर दुरित है यदि अत्यधिक सेवन करने पर हमें परिणाम में वह कष्ट दे, और वही हित, मित और ऋतरूप में सेवन करने पर सुपरिणाम वाली हो कर भद्र भी हो सकती है।

उपासक यहाँ उन सभी प्रकार के दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुष्ट आचारों से बचना चाहता है जिन के परिणाम में उसे दुःख मिलता है। इस में वह देवाधिदेव परमेश्वर की साक्षी में चलने का प्रयत्न करता है और साथ–साथ प्रार्थना भी करता रहता है। उस पवित्रतम प्रभुदेव से उसे निरन्तर उत्साह मिलता रहता है। उसके नेतृत्व में अपना सूक्ष्म से सूक्ष्म दुर्गुण भी उसे ऐसा स्पष्ट भासने लगता है कि वह दंग रह जाता है। हम अपने कमरे में बल्ब जलाते हैं और उसमें हर वस्तु जैसे हमें स्पष्ट दिखाई देने लगती है, वैसे ही उसे अपने अन्दर की प्रत्येक बुराई भासने लगती है। ज्यों–ज्यों वह उन बुराइयों को दूर करता रहता है, त्यों–त्यों वह निर्मल होता हुआ उस परमदेव परमेश्वर की कृपा का पात्र बनता चला जाता है। यह उपासक प्रभु से प्रार्थना करता है–"हे दिव्य देव ! मेरे सब दुर्गुण दूर करो।" क्योंकि उपासक जानता है कि दुर्गुण, बुराई या छिद्र एक भी शेष रह गया तो भले ही वह कितना भी छोटा ही क्यों न हो, वह छोटा–सा छिद्र भी जैसे शनैः–शनैः भरे हुए घड़े को रिक्त कर देता है वैसे ही उसका वह छोटा–सा दुर्गुण भी उसे शनैः–शनैः सद्गुणों से रिक्त कर मिट्टी में मिला सकता है। अतः वह प्रार्थना करता है–मेरे सब दुर्गुण दूर कर।" इस प्रकार उपासक सब दुर्गुणों की निवृत्ति चाहता है। तभी तो वह उस परमदेव की शरण में जा बैठता है जो स्वयं सब प्रकार के दुर्गुणों से दूर रहता है, और अपनी शरण में आये हुए को भी सब दुर्गुणों से दूर कर देता है। वह देव दुर्गुणों से दूर ही नहीं है अपितु सद्गुणों का भण्डार भी है और वह अपनी शरण में आने वाले को भी सद्गुणों से अलंकृत कर देता है।

भक्त प्रभु से प्रार्थना करता है–"हे प्रभो ! बहुत से दुरित ऐसे होंगे, जो मुझे तो दुरित नहीं दीखते हैं पर होते वास्तव में वे भी दुरित ही हैं परन्तु तू उन्हें जानता है और मैं नहीं जानता। अतः ऐसे भी सब दुरितों को तू दूर कर जो मेरी दृष्टि में दुरित नहीं पर तेरी दृष्टि में दुरित ही हैं। तभी तो हे परमदेव ! मैं तेरी शरण में आया हूँ। क्योंकि तेरी शरण में रह कर ही सर्वविध दुर्गुणों से मैं मुक्त हो सकूंगा।"

"हे देव ! **(यत् भद्रं तत् नः आसुव)** जो भद्र है वह हमें प्राप्त करा।" उपासक ने 'भद्रं' कहकर एकवचन में यह एक वस्तु माँगी परन्तु इस एक भद्र में भक्त ने कुछ छोड़ा नहीं। भद्रता–भलाई एक भी यदि जीवन में आ जाए तो वह हमें भद्र, भले लोगों की श्रेणी में ला खड़ा कर देती है और बुराई एक भी यदि जीवन में आ जाए तो वह हमें अभद्रों की पंक्ति में खड़ा कर देती

है। इसके अतिरिक्त जैसे एक बुराई अन्य बुराइयों के लिए द्वार बना देती है वैसे एक भलाई भी अन्य भलाइयों के लिए रास्ता खोल देती है, तभी तो अन्य भलाइयाँ स्वयमेव आना आरम्भ कर देती हैं। जैसे जो मनुष्य चोरी करना आरम्भ कर देगा, उस के जीवन में झूठ– मिथ्याभाषण आदि स्वयमेव आना आरम्भ हो जायेगा। चोरी करने वाला स्वभावतः अन्धकारप्रिय हो जायेगा। वह न्याय की बात करने वालों को शत्रु और रिश्वत लेकर अन्याय पूर्वक अपने को बचाने वालों को अपना मित्र समझता जायेगा इत्यादि।

इसी प्रकार यदि कोई अपने जीवन में एक भद्रता ले आता है, जैसे कि वह सोच ले "मैं किसी को अन्तःकरण से दुःख नहीं दूँगा तो वह कभी असत्य भाषण नहीं करेगा। किसी से छल नहीं करेगा, गाली नहीं देगा क्योंकि वह जानता है कि इन कर्मों के परिणामस्वरूप दूसरों का दिल दुःखी होता है। इतना ही नहीं बल्कि वह इसके विपरीत प्यार से बोलेगा, शिष्टाचार से बोलेगा। सेवा करेगा, सहायता करेगा क्योंकि ये कर्म अगले को दुःखी नहीं करते बल्कि और अधिक सुखी करते हैं।

इस के अतिरिक्त 'भद्रम्' शब्द यद्यपि है तो एकवचन में, पर इस एकवचन वाले 'भद्र' शब्द में भक्त ने प्रभु से सब कुछ माँग लिया। 'भद्र' शब्द **'भदि कल्याणे सुखे च'** इस धातु से बनता है जिसका अर्थ होता है कि 'जिसके करने से इस संसार में सुख मिले और इस संसार से विदा हो जाने पर कल्याण होवे–वह भद्र कहलाता है।' भक्त प्रभु से तभी तो प्रार्थना करता है–**"यत् भद्रं तत् नः आसुव"** कि "जो भद्र हो, वह हमें प्राप्त करा। अर्थात् हमें उस गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ की प्राप्ति करा जिस के परिणाम स्वरूप हमें अभ्युदय और निःश्रेयस, इन दोनों की प्राप्ति हो।"

उपासक इस मन्त्र में उस प्रभुदेव से इतना नैकट्य अनुभव कर रहा है कि शिष्टाचार की मर्यादा को तोड़ कर प्यार में विभोर होकर वह कह रहा है कि–"हे प्रभुदेव ! तू सब दुरितों को दूर कर और जो भद्र है उसे तू हमें प्राप्त करा।" उपासक यहाँ इतने विशाल हृदय वाला बन गया है कि प्रभुभक्ति में विभोर होकर भी स्वभाव वश अन्यों को नहीं भूला इसलिए तो उसने प्रार्थना की कि–"प्रभु देव ! तू सब के दुरितों को दूर कर और हम सब को भद्रता की प्राप्ति करा।'

इस मन्त्र में 'देव' शब्द के साथ एक दूसरा सम्बोधन दिया हुआ है वह यह कि जहाँ प्रभुदेव उपासक की दृष्टि में पवित्रतम है, दिव्यतम है, वहाँ वह 'सविता' भी है। सविता शब्द **'षु प्रेरणे'** (तुदादि गण) इस धातु से बनता है। वह प्रभु देव उत्तम गुण, कर्म, स्वभावों की सब को प्रेरणा देता है। उसी की प्रेरणा से प्रेरित हुए मनुष्य धीरे–धीरे देव बन जाते हैं, दिव्य बन जाते हैं, पवित्र बन जाते हैं। तब वे दिव्य देव प्रभु के प्यारे बन कर उस के परम प्यार– मोक्षानन्द के पात्र बन जाते हैं।

उस सविता देव की प्रेरणाओं को जिसने हृदय से अर्थात् श्रद्धा से सुनना आरम्भ कर दिया तो समझ लो कि वह तर गया उसका लोक भी बन गया और परलोक भी बन गया।

वह हमें प्रेरणा क्यों देता है ? क्योंकि वह हमारा जनक है, उत्पन्न करने वाला पिता है वा उत्पन्न करने वाली माता है। 'सविता' {**त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ। अधा ते सुम्नमीमहे।। अथर्व. 20.10.82।। ऋग्वेद 8.19.10।।**} शब्द **'पुञ् अभिषवे** तथा **षूङ् प्राणिगर्भविमोचने'** इन धातुओं से बनता है। वह जगत् को उत्पन्न करता है। अतः सब की जननी और जनक है अर्थात् माता और पिता है। यदि कोई कहे कि हमें उत्पन्न करने वाले तो हमारे ये माता–पिता हैं तो यह नियम है कि जो जिसके उत्पन्न करने वाले होते हैं, वे उसके सम्बन्ध में यह जानकारी रखते हैं कि वह वस्तु कैसे बनी है। यदि हम अपने इन माता–पिताओं से पूछते हैं कि "जब आपने हमें उत्पन्न किया है, तो बताओ हमारी आँख की पुतली का निर्माण आपने कैसे किया है ?" यह सुनकर वे मौन हो जाते हैं अथवा बड़े धैर्य से वे उत्तर देते हैं कि "हे प्रिय वत्स ! वास्तव में हम तुम्हारे जनक नहीं हैं, तुम्हारा वास्तव में सच्चा जनक और सच्ची जननी तो वह सविता देव ही है। उसी ने तुम को उत्पन्न किया है। अतः वही जान सकता है कि यह आँख की पुतली कैसे बनी है।"

वास्तव में जो जिस वस्तु का उत्पन्न करने वाला होता है उस की रुचि भी उस के साथ सदा बनी रहती है। इस संसार में एक बालक यदि गन्दा होता है तो प्रायः सभी यह देखते हुए, जानते हुए भी यह कहते हुए आगे निकल जाते हैं कि 'यह बालक बहुत गन्दा है', पर उसे कोई साफ नहीं करता। अब अगर उस की जननी और जनक को यह ज्ञान हो जाए तो वे वहाँ से तब तक चल नहीं सकते जब तक कि वे उसे साफ न कर देंगे या नहला धुला न लेंगे आदि–आदि। ठीक इसी प्रकार यह देव सविता भी हमें उत्पन्न करने वाली माता है, पिता है अतः वह हमें प्रेरणा देता है ताकि हम अच्छे साफ–सुथरे पवित्र बनें और जग में अच्छे लगें परन्तु एक दिन ऐसा भी आ जाता है कि ये माता–पिता भी समझाते समझाते हार जाते हैं थक जाते हैं, निराश हो जाते हैं, यह सोच कर कि ये मानते तो हैं नहीं, अतः इन्हें समझाना व्यर्थ है। इनके साथ माथा–पच्ची करना बेकार है परन्तु जो इनसे भी महान् है, वास्तव में वह ही हमारा सच्चा जनक और जननी है, जिसे वेद की भाषा में 'सविता' कहते हैं, वह न ही हारता है, न ही थकता है और न ही कभी निराश होता है। जब ये माता–पिता हार कर वानप्रस्थ आश्रम आदि में चले जाते हैं तब भी वह हर बुरे कार्य के करने पर अन्दर से भय, शंका, लज्जा उत्पन्न करके हमें सावधान करता रहता है और हर अच्छे कार्य पर अन्दर से आनन्द, उत्साह और निर्भयता प्रदान करके आगे बढ़ने और ऊपर उठने की प्रेरणा देता रहता है। उस परम माता, परम पिता रूप सविता देव का इतना स्नेह और इतनी सहानुभूति है हम से कि जब तक पूर्ण पवित्र करके हमें वह मोक्ष तक न पहुँचा दे तब तक वह हमारे अन्तःकरण को धोने में संलग्न रहता है। इन जागतिक माता और पिता का धैर्य टूट जाता है पर उसका धैर्य नहीं टूटता। अतः उन (**सविता वै देवानां प्रसवितार** शतपथ 1.1.2.17) देवों को भी उत्पन्न करने वाले तथा प्रेरणा देने वाले सविता देव का जितना भी धन्यवाद किया जाये, उतना ही कम है। इस संसार में भी जो हमें नाना प्रकार के कष्ट एवम् आपत्तियाँ सहनी पड़ती हैं, वे भी वास्तव में कल्याण के लिए ही होती हैं, पर हम इन्हें समझ नहीं पा रहे होते हैं। एक बच्चा गन्दा होता है, नहाता नहीं है, कपड़े नहीं बदलता, तब माँ जबरदस्ती उसको पकड़ कर उस के कपड़े उतारती है, उस के सिर, हाथ, मुख और बदन आदि पर साबुन लगाती है और उसको रगड़–रगड़ कर धोती है तब वह बालक रोता है, चिल्लाता है, भागता है, पर नहा धो लेने पर जब माँ उसे साफ–सुथरे कपड़े पहनाती है, सुरमा डालती है, तेल लगाती है और फिर गोदी में लिटा कर दूध पिलाती है, तब उस बच्चे की दुरित–गन्दगी की निवृत्ति के उपरान्त अमृत रस का पान करने को मिलने पर वह चैन की नींद सो जाता है, उस समय उस को जो विश्राम और चैन मिलता है उसे वह ही जानता है। इसी प्रकार ये संसार की आपत्तियाँ एवं कष्ट रूप उस परम पिता परमेश्वर की रगड़ाई में जब हमारी सारी गन्दगी धुल जायेगी और हम साफ–सुथरे निर्मल और पवित्र हो जाएँगे तो फिर केवल हम संसार में ही सुशोभित नहीं होंगे बल्कि प्रभु भजन में बैठकर उस सविता देव के अमृत रस का पान कर मोक्ष के, आनन्द के सच्चे पात्र बनकर परम शान्ति, परम आनन्द के भागी भी बन सकेंगे अतः हमें इस संसार की आपत्तियों में भी यही समझना चाहिए कि वह परम जनक या परम जननी हमें रगड़–रगड़ कर धो रही है इसलिए कि हम साफ–सुथरे हो जाएँ, निर्मल और पवित्र हो जाएँ तथा अपने लक्ष्य रूप भद्र–सुख और कल्याण को प्राप्त करें।

**'वैदिक सुधा–वेद सुधा (भाग–1)' से साभार**

यआत्मदा बलदा यस्य विश्वउपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्यच्छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

यजु. 25.13

जो देता हमको आत्म दान,
जो करता हमको बल प्रदान,
ये अग्नि, सूर्य, पवनादि देव
चलते जिसका आदेश मान;
हैं जिसे पूजते सभी जीव;
जिसका आश्रय है अमृत-तुल्य;
जिसकी छाया है सुखद मृत्यु,
है उसी देव के तो निमित्त यह पूजा-आयोजन महान।

# मुनिवर श्री पं. गुरुदत्त विद्यार्थी

{तीन अंकों में समाप्य}

● डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री

**आइसिस मिस्र देश की एक देवी है। इण्डिया इन ग्रीस में विद्वान् लेखक ने सभी ग्रीक भौगोलिक नामों का स्रोत भारतीय संस्कृत नाम सिद्ध किए है।}**

**जन्म तथा शिक्षा**

**जन्म–26 अप्रैल 1864 ई.** तदनुसार वैशाख कृष्ण पंचमी, मंगलवार, 1921 विक्रम संवत्। पिता का नाम–लाला रामकृष्ण। पिताश्री फारसी के योग्य विद्वान् तथा पंजाब शिक्षा विभाग में अध्यापक थे। बालक का जन्म का नाम 'मूला' रखा गया। 12 वर्ष के होने पर माता–पिता के साथ हरिद्वार जाने पर वहाँ गोस्वामी राधेलाल ने बालक का नाम 'गुरादित्ता' (गुरुदित्ता) कहकर पुकारा। बड़ा होने पर गुरांदित्ता ने स्वयं अपना नाम संशोधित कर 'गुरुदत्त' रख लिया।

गुरुदत्त ने 5 वर्ष की आयु में उर्दू वर्णमाला सीखी। अध्यापक पढ़ा रहा था 'अलिफ' और 'बे' के योग से 'अब' बनता है। प्रखर बालक गुरुदत्त ने पूछा कि अलिफ और बे के योग से 'अलिफबे' ही बन सकता है 'अब' नहीं। अध्यापक सन्तुष्ट न कर सके और झुँझला गये। 6 वर्ष के होने पर प्राचीन भारतीय पद्धति से गणित की पढ़ाई प्रारम्भ हुई। **1878 ई.** में गुरुदत्त ने पंजाब शिक्षा विभाग की एंग्लो वर्नाकुलर मिडिल परीक्षा पास कर मुलतान के उच्च विद्यालय में प्रवेश प्राप्त किया। विचारों में संशय का भाव, कच्ची आयु–यही कोई 14 वर्ष, परन्तु ज्ञानोपार्जन की लग्न। ईश्वर प्रदत्त तीव्र बुद्धि, योग्यता तथा अद्भुत स्मरण शक्ति ने अध्यापकों एवं सहपाठियों को चकित कर दिया। कई बार अध्यापक भी बालक के प्रश्नों का उत्तर न दे पाते। दशम कक्षा के विद्यार्थी प्रायः गुरुदत्त से सीखने के लिए आने लगे। बुद्धि इतनी कुशाग्र थी कि गणित के प्रश्नों के उत्तर मौखिक ही दे दिया करते थे। **विचारों की स्वतंत्रता और जिज्ञासा–वृत्ति ने उसे नास्तिकता की ओर ढकेल दिया। पाश्चात्त्य विद्वानों के ग्रन्थ पढ़ने से प्राचीन विश्वास हिल गये।** पाठ्य पुस्तकों से भी **संशयवाद को प्रोत्साहन मिला।** उन दिनों हिन्दुओं में बालविवाह की प्रथा थी। मिडिल में पढ़ते समय ही गुरुदत्त का विवाह कर दिया गया, धर्मपत्नी का नाम 'सेवीबाई' था। गुरुदत्त की स्वाध्याय में बड़ी रुचि थी, पहले स्कूल का पुस्तकालय छान मारा, फिर लहंगा खां के बाग में स्थित पुस्तकालय की अधिकांश पुस्तकें पढ़ डालीं। मास्टर दयाराम वर्मा से **'आईसिस अन्वेल्ड'**, **'द बाइबिल इन इण्डिया'** तथा **'इण्डिया इन ग्रीस'** आदि ग्रन्थ लेकर पढ़े।

**{आइसिस अन्वेल्ड, द बाइबिल इन इण्डिया तथा इण्डिया इन ग्रीस क्रमशः मैडम ब्लैवेट्स्की, एम.एल. जाक्योल्यो व पोकॉक ने लिखी थीं।**

स्कूल की सामान्य शिक्षा सम्बन्धी पुस्तकों के अतिरिक्त विज्ञान की आरम्भिक पुस्तकों का अध्ययन भी साथ–साथ चलता रहता था।

**संस्कृत शिक्षा के प्रति अभिरुचि**

कुछ दिनों के पश्चात् गुरुदत्त पर संस्कृताध्ययन की रुचि जागृत हुई। यह जागृति पराकाष्ठा तक पहुँच गई। संस्कृताध्यापक के पास अन्य विद्यार्थियों के साथ संस्कृत पढ़ने जाने लगे। अध्यापक से कई बार इनकी शंकाओं का समाधान न हो पाता अतः असन्तुष्टि की स्थिति में मुख्याध्यापक मनमोहन सरकार से अपनी समस्या बताई। मनमोहन सरकार गुरुदत्त की योग्यता से पूर्व परिचित थे। उन्होंने कहा–मेरी राय में तुम स्कूल में संस्कृत मत पढ़ो और स्वतंत्र अध्ययन करो। जल की धारा अपना मार्ग बनाने स्वयं निकल पड़ी। सर्वप्रथम डॉ. वेलेन्टाइन कृत **'ईजी लेसन्ज इन संस्कृत ग्रामर'** पढ़ा। संयोगवश तभी ऋषि दयानन्द सरस्वती की ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका हाथ लग गयी। उसका संस्कृत भाग शब्दकोश की सहायता से पढ़ लिया। आर्य समाज मुलतान के अधिकारियों से गुरुदत्त ने कहा–"मेरा अष्टाध्यायी तथा वेदभाष्य पढ़ने का प्रबन्ध कर दो" आर्य समाजियों में खूब उत्साह था। पं. अक्षयानन्द मुलतान बुलाये गये। गुरुदत्त के साथ भक्त रैमलदास आदि ने संस्कृत पढ़ना प्रारम्भ कर दिया। गुरुदत्त कोई साधारण विद्यार्थी तो थे नहीं। अक्षयानन्द से भी सन्तुष्टि न हो सकी। डेढ़ मास में अष्टाध्यायी का डेढ़ अध्याय पढ़ने के पश्चात् अक्षयानन्द से पढ़ना छोड़ दिया। **शेष अष्टाध्यायी ऋषि दयानन्द के वेदांग प्रकाश (14 भाग) की सहायता से स्वयं पढ़ी।** कालेज में प्रविष्ट होने से पूर्व अष्टाध्यायी पर गुरुदत्त का अच्छा अधिकार हो गया।

**आर्यसमाज में प्रवेश**

भक्त रैमलदास तथा लाला चेतनानन्द गुरुदत्त के अभिन्न सखा थे। ये दोनों युवक आर्यसमाज मुलतान के सदस्य थे। गुरुदत्त उनके साथ प्रायः ईश्वरादि विषयों पर वार्तालाप करते रहते। जब वह दशम कक्षा में थे तभी सत्यार्थप्रकाश का प्रथम संस्करण पढ़ा। बस, संस्कृत तथा सत्यार्थप्रकाश के अध्ययन से आर्यसमाज में रुचि बढ़ने लगी। हृदय में सत्य का प्रकाश हुआ। परिणामस्वरूप 20 जून 1880 रविवार के शुभ दिन उसने आर्यसमाज की सदस्यता का फार्म भरकर मंत्री जी को दे दिया और विधिवत् आर्यसमाज मुलतान के सदस्य बन गये।

**{गुरुदत्त ऋषि दयानन्द कृत ग्रन्थ पढ़कर स्वयं आर्यसमाज के सदस्य बने थे। उन्हें आर्यसमाजी बनाने का श्रेय किसी व्यक्ति विशेष को नहीं है। आर्यसमाज मुलतान का सदस्य बनने के लगभग सात महीने पश्चात् वे लाहौर गए। वहाँ उनकी भेंट साईंदास, जीवनदास आदि से हुईं इसके काफी समय पश्चात् लाजपतराय, हंसराज और मुन्शीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) आर्यसमाजी बने।}**

गुरुदत्त का आर्यसमाज में प्रवेश एक क्रान्तिकारी ऐतिहासिक घटना सिद्ध हुई। निश्चय ही गुरुदत्त पूर्वजन्म से उपार्जित अद्भुत मेधा का संस्कार लेकर उत्पन्न हुए थे। मुनि–वृत्ति भी पूर्वजन्मार्जित संस्कार से मिली थी। गुरुदत्त ने ***'आईना–ए–मजहब–ए–हनूद'*** (हिन्दू–मत–दर्पण) पढ़कर 'अनहद' (असीम) शब्द के जप की रीति सीख ली और जप आरम्भ कर दिया। वे घंटों आकाश की ओर देखते रहते तथा उस ईश्वर की कारीगरी पर विचार किया करते। साथ–साथ प्राणायाम का अभ्यास भी शुरु कर दिया। माता के पूछने पर ईश्वरभक्त बालक ने सविनय कहा था–'माँ! मैं आकाश की अद्भुत चमकीली वस्तुओं को देखता हूँ, जिस प्रभु ने इस चमकने वाले सूर्य आदि रचे हैं। उस तक पहुँचने का मार्ग ढूँढ़ रहा हूँ। तू भी उधर देख और मेरी तरह उस रचयिता को ढूँढ।' **{पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी (डॉ. रामप्रकाश), अक्तूबर 2012 ई.–पृष्ठ 06}** पं. गुरुदत्त को बाल्यकाल से ही दूध और पेड़े का बड़ा चाव था। परिवार के शाकाहारी न होने पर भी गुरुदत्त को मांसाहार से स्वाभाविक घृणा थी। मिडिल की परीक्षा से पूर्व एक बार पिता जी ने उसे मांस खाने के लिए प्रेरित किया। परन्तु तभी गुरुदत्त को कहीं से ***'सोलह दलाइल बरखिलाफ गोश्त'*** पुस्तक हाथ लग गई। उसे पढ़कर दृढ़ विश्वास हो गया कि मांस अभक्ष्य है। बस, फिर क्या था! गुरुदत्त ने तुरन्त अपने पिताजी से स्पष्ट कह दिया कि जब तक तर्क एवं प्रमाण से यह सिद्ध नहीं हो जाता कि मांस–भक्षण पाप नहीं है तब तक मुझे इसके लिए विवश न कीजिए, फिर पिता ने मांसाहार के लिए आग्रह नहीं किया।

स्वाध्याय में रुचि के कारण गुरुदत्त ने 16 वर्ष की अल्पायु में ही संस्कृत, उर्दू, फारसी, अरबी, हिन्दी तथा अंग्रेज़ी में भी अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। अष्टाध्यायी पर तो उनका असाधारण अधिकार हो गया। फारसी तथा अरबी व्याकरण का ज्ञान भी कम न था। एफ.ए. में पढ़ते समय गुरुदत्त लाहौर से अपने घर मुलतान आये। वहाँ कैलाशचन्द्र बोस, मुख्याध्यापक, डिस्ट्रिक्ट स्कूल ने ईसाई मत के पक्ष में और आर्यसमाज के विरुद्ध भाषण दिया था। इसके उत्तर में गुरुदत्त ने अंग्रेज़ी में जो व्याख्यान दिया उसे सुनकर विदेशी श्रोता भी चकित रह गये। इन्हीं दिनों गुरुदत्त ने बाबा निहालचन्द वेदान्ती के साथ शास्त्रार्थ में जीव और ईश्वर को अलग–अलग सिद्ध कर दिया। एफ.ए. की परीक्षा सिर पर थी तब भी गुरुदत्त संस्कृत भाषा के व्याकरण, दर्शनशास्त्र, भौतिकीय विज्ञान, गणित तथा विभिन्न भाषाओं के साहित्य के अनुशीलन से अपने को बचा नहीं पाते थे। संस्कृत ग्रन्थों, फारसी पुस्तकों तथा अरबी व्याकरण का विशेष अध्ययन भी चल रहा था। परीक्षा से पूर्व पाठ्य पुस्तकों को एक बार अवश्य पढ़ लिया और इसी के सहारे मई 1883 ई. में पंजाब विश्वविद्यालय से इण्टरमीडिएट की परीक्षा दे दी और प्रान्त में प्रथम रहे। **{गुरुदत्त, चेतनानन्द, हंसराज तथा पण्डित हरिकृष्ण ने एफ.ए. परीक्षा में क्रमशः पहला, सातवाँ, तेरहवाँ, और सतरहवाँ स्थान प्राप्त किया था (द ट्रिब्यून, 16 जून 1883)}**

**ऋषि की अन्तिम घड़ी में गुरुदत्त**

29 सितम्बर 1883 ई. को जोधपुर में ऋषि दयानन्द को दूध में संखिया मिलाकर कालकूट विष दे दिया गया। 12 अक्तूबर 1883 ई. के 'राजपूताना गजट' में ऋषि दयानन्द की जोधपुर में अस्वस्थता का समाचार प्रकाशित हुआ। लाहौर आर्य समाज की अन्तरंग सभा ने उपप्रधान लाला जीवनदास तथा 19 वर्षीय गुरुदत्त को स्वामी जी की सेवा शुश्रूषा के लिए भेजने का निश्चय किया। ये दोनों 28 अक्टूबर को अजमेर पहुँचे, लाला जीवनदास ने स्वामीजी से गुरुदत्त का परिचय कराया। गुरुदत्त ने नम्रतापूर्वक श्रीचरण छू नमस्ते की। ऋषिराज के सारे शरीर पर फफोले थे, हिचकियाँ आ रही थी, फेफड़ों की सूजन ज़ोरों पर थी। एक मास की बीमारी ने बिल्कुल निर्बल कर दिया था। गुरुदत्त ने जिस भक्तिभाव से ऋषि की सेवा की, उससे सभी लोग प्रभावित हुए। ऋषि को भी इनसे विशेष स्नेह हो गया। 30 अक्टूबर दोपहर बाद

जीवनदास ने पूछा–'महाराज! इस समय कहाँ हैं?' उत्तर मिला 'ईश्वरेच्छा' में। 4 बजे के लगभग स्वामी जी ने बाहर से आये हुए सभी सज्जनों को बुलाया और सबकी ओर ऐसे निहारा मानो मूक भाषा में उपदेश दे रहे हों। फिर 5:30 बजे सब भक्तों को पीछे खड़े होने का निर्देश दिया, तब सभी दरवाजे, रोशनदान खुलवा दिए। पक्ष, तिथि, वार के पूछने पर बताया गया–कृष्णपक्ष, अमावस्या और मंगलवार। लाला जीवनदास ने पं. गुरुदत्त विद्यार्थी की जीवनी के लेखक लाला लाजपतराय को यह बताया था कि 'ऋषि की दिव्य तथा तीक्ष्ण दृष्टि ने आर्य समूह में से इस रत्न को पहचान लिया था। जब सामने कोई नहीं रहा, तब ऋषि ने गुरुदत्त को अपने अति निकट बुलाकर बहुत स्नेह के साथ दो–चार शब्द में कुछ कहा भी। **{द्रष्टव्य–लाजपतराय, जीवन चरित्र पण्डित गुरुदत्त जी विद्यार्थी (उर्दू). संस्मरण लाला जीवनदास, पृष्ठ 441}** ऋषि ने अपने अन्तिम समय में वेद मंत्रों का पाठ किया, ईश्वर का गुणगान किया, फिर गायत्री मंत्र 'और 'विश्वानि देव.' मंत्र बोले, थोड़ी देर के लिए समाधिस्थ हुए और नेत्र खोले तथा सीधे लेट गये। ऋषि की अन्तिम वाणी थी–'हे दयामय सर्वशक्तिमान् परमेश्वर ! तेरी यही इच्छा है। तेरी यही इच्छा है। तेरी इच्छा पूर्ण हो। अहा! तूने अच्छी लीला की।' तदनन्तर साँस को रोककर एक दम बाहर फेंक दिया। जो मृत्यु एक मास से दरवाजे तक आकर भी दस्तक देने का साहस न कर पा रही थी उसका स्वयं वरण कर लिया। मृत्यु की मृत्यु हो गई और वे अमर हो गये। **{पं. गुरुदत्त विद्यार्थी (डॉ० रामप्रकाश) पृ. 31. संस्करण–2012 ई.}** गुरुदत्त के लिए ऋषि के जीवन का यह अन्तिम दृश्य अलौकिक था, अद्भुत था तथा सभी संशयों और शंकाओं का समाधान था। अतः अब तक के गुरुदत्त के जीवन में अनीश्वरवादिता और संशय के मध्य जो भी स्थिति थी वह भस्मीभूत हो गई सच्ची आस्तिकता की निर्मल ज्योत्स्ना से गुरुदत्त का मन–मस्तिष्क आप्लावित हो उठा। **{पं. युधिष्ठिर मीमांसक ने मुझसे यह कहा था कि प्राचीन इतिहास एवं शास्त्रों में जिस 'शक्तिपात' की बात आती है, उसमें कोई योग्य गुरु किसी योग्य शिष्य को अपने क्षणिक या अल्प समय में अपनी दृष्टि या उपदेश से शिष्य में वह अर्हता पैदा कर देता है, जिसे जन सामान्य असाधारण या अलौकिक समझता है। ऋषि दयानन्द और गुरुदत्त का मिलन और शिष्य को प्राप्तव्य की प्राप्ति 'शक्तिपात' का ही उदाहरण है}** 8 नवम्बर 1883 को लाहौर के आर्यसमाज मन्दिर में आयोजित शोकसभा में गुरुदत्त ने जिस भावपूर्ण एवं हृदयद्रावक शब्दों में ऋषिवर के इहलीला–लोक संवरण का चित्र खींचा, उससे सुननेवाले की आँखों से अश्रुधाराएँ बह निकलीं।

**ऋषि का स्मारक डी.ए.वी. स्कूल**

ऋषि की स्मृति में दयानन्द एंग्लो वैदिक स्कूल और कॉलेज खोलने का विचार बना। गुरुदत्त ने बताया कि वैदिक साहित्य में सत्यविद्याएँ भरी पड़ी हैं अतः आध्यात्मिक और भौतिक ज्ञान तथा जातीय अस्मिता के लिए दयानन्द एंग्लो वैदिक की स्थापना आवश्यक है। वस्तुतः दयानन्द कॉलेज आन्दोलन की सफलता के लिए गुरुदत्त सरीखे वक्ता की महती आवश्यकता थी, जिसने पूर्व और पश्चिम दोनों का अवलोकन किया हो, जो न केवल पाश्चात्त्य विज्ञान का ही विद्वान् हो अपितु वेदशास्त्रों का भी ज्ञाता हो और जो तुलनात्मक विवेचन कर प्राचीन आर्य गौरव की पताका लहरा सके और यह कार्य गुरुदत्त के अलावा और किसी से इतनी सफलतापूर्वक नहीं होता। गुरुदत्त कहीं वेद–वेदांग, कहीं वैदिक संस्कृति, कहीं ब्रह्मचर्य, कहीं संस्कृत, कहीं प्राचीन शिल्प आदि के पुनरुद्धार के नाम पर दयानन्द कॉलेज के लिए जब धन माँगते तो लोग धन की वर्षा कर देते थे। देवियाँ हाथों की चूड़ियाँ और अनन्त तक उतार देती थीं। **{पं. गुरुदत्त विद्यार्थी (डॉ. रामप्रकाश) पृष्ठ 38}** आर्यसमाज में गुरुदत्त की माँग बढ़ रही थी। उन्हें सुनने के लिए जनता उमड़ पड़ती थी। उनकी विद्वत्ता, चरित्र की निर्मलता तथा ऋषि के सिद्धान्तों में श्रद्धा के कारण लोग स्वतः आकर्षित हो जाते थे। आर्यजन उनकी मनमोहन तथा प्रभावशाली अपील पर दिल खोलकर दान देते थे। आखिर प्रतीक्षा की घड़ियाँ समाप्त हुईं और 01 जून 1886, मंगलवार को आर्यसमाज मन्दिर, गली बच्छोवाली में एक सार्वजनिक सभा करके डी०ए०वी० स्कूल की स्थापना कर दी गई। इस अवसर पर गुरुदत्त का भाषण हुआ। डी.ए.वी. स्कूल का 10वीं कक्षा का परीक्षाफल 1888 ई. में प्रान्त में सर्वोत्तम रहा। इस आश्चर्यजनक सफलता से प्रभावित होकर जनता ने इसे कॉलेज बनाने की माँग की। गुरुदत्त व साईंदास ने इसका समर्थन किया। पंजाब विश्वविद्यालय की सिंडीकेट ने 18 मई 1889 को एक प्रस्ताव द्वारा कॉलेज को मान्यता प्रदान कर दी अतः कॉलेज की प्रथम वर्षीय कक्षा 1889 ई. में 01 जून से नियमित ढंग से प्रारम्भ कर दी गयी। गुरुदत्त गणित तथा विज्ञान विषय अवैतनिक पढ़ाने लगे। पौधा धीरे–धीरे विशाल वृक्ष बनने लगा। *क्रमशः*

*अध्यापक आवास, स्टेशन रोड, अमेठी, उत्तर प्रदेश – 227405*

☞ पृष्ठ 04 का शेष

# देश की पुकार

लगाती हुई भारत के समुद्र समीपवर्ती सीमाप्रान्तों पर आ पहुँचीं। उन्हें किस प्रकार देश में प्रवेश मिला, किस प्रकार देश की बिगड़ी हुई दशा ने उन्हें यहाँ आधिपत्य जमाने में सहायता दीं, किस प्रकार अन्य शक्तियों को परास्त करके अंग्रेज़ों ने प्रभुत्व जमाने में सफलता प्राप्त की, यह सब विषय राजनैतिक इतिहास के हैं। हमें यहाँ यह देखना है कि यूरोपियन सफलता का प्रभाव भारत के धार्मिक विचारों पर किस प्रकार पड़ा। यूरोपियन जातियाँ अपने साथ दो चीज़ें लाई–**एक ईसाइयत और दूसरी पाश्चात्य सभ्यता।** इन दोनों का भारत पर एक साथ प्रभाव हुआ। इस्लाम तलवार के साथ आया था, वह बड़े वेग से फैला, परन्तु उसका प्रतिरोध भी उसी वेग से हुआ। ईसाइयत का प्रचार दूसरी विधि से हुआ। उस विधि में शिक्षण ालय, प्रचार का संगठन और प्रलोभन, ये तीन साधन प्रधान थे। ईसाइयों ने स्कूल और कॉलेज खोलकर भारत के शिक्षित समाज को खा जाने का यत्न किया। कुछ काल तक उस यत्न में सफलता भी हुई। ईसाइयों का प्रचार सम्बन्धी संगठन पहले ही बहुत बढ़िया था, भारत के अनुभव से उसमें और भी अधिक पूर्णता आ गई। जो भारतवासी ईसाई बन गए, वे चाहे किसी भी दर्जे के हों, सरकारी नौकरियों में उन्हें तरजीह दी जाने लगी। इस प्रकर ईसाई धर्म धीरे–धीरे परन्तु निश्चित रूप से देश की गहराई में प्रवेश करने लगा।

जब तक इस्लाम का प्रचार तलवार के ज़ोर से होता रहा, हिन्दू धर्म भी उससे बचने के लिए अपने कोट के चारों ओर खाइयाँ खोदता रहा, परन्तु अकबर तथा उसके दो उत्तरवर्ती राजाओं ने गहरे शान्त उपायों से इस्लाम की जड़ पाताल में पहुँचाने का उद्योग किया, तब ऐसे भक्तजन उत्पन्न हुए जिन्होंने हिन्दू–मुसलमानों के परस्पर भेदों को दूर करके एकेश्वरवाद के झंडे के तले लाने का यत्न किया। फिर जब औरंगजेब ने शान्त नीति का परित्याग किया, तब उत्तर और दक्षिण में हिन्दू धर्म तलवार लेकर खड़ा हुआ। यह स्मरण रखना चाहिए कि औरंगज़ेब की अनुदार धार्मिक नीति से पहले सिक्ख–मत भी हिन्दू–मुसलमान के भेद के मिटाने का ही एक यत्न था।

ईसाइयत का प्रचार अकबर की नीति के अनुसार शुरु हुआ। परिणाम भी वैसा ही हुआ। विश्वासी भारतवासियों के हृदयों ने बिना किसी आशंका के ईसाइयत के प्रभावों का स्वागत किया। कई बड़ी प्रतिष्ठा और योग्यता रखने वाले भारतवासी, जो शायद तलवारी धर्म का सामना करने में तलवार के घाट उतरने को सहर्ष उद्यत हो जाते, इस शान्त धावे के शिकार हुए। कुछ ही समय पीछे ईसाई–काल के कबीर भी जन्म लेने लगे। धर्म के विश्वरूप में ईसाइयत और हिन्दूपन के भेद को खपा देने का उद्योग बंगाल में ब्राह्मसमाज ने उठाया। यदि ब्राह्मसमाज के इतिहास को विस्तार से पढ़ें तो हमें प्रतीत होगा कि उसके नेताओं का उद्योग ईसाइयत और हिन्दू धर्म की मध्यमावस्था निकाल कर दोनों को साथ–साथ दीर्घजीवी बनाने के लिए था। हिन्दूपन को ईसाइयत की कलम लगाकर उस रगड़ को दूर करने के लिए था, जिसका शीघ्र या देर में उत्पन्न होना अवश्यम्भावी था।

शान्त परन्तु गहरे और पेंचदार उपायों से ईसाइयत भारत के धार्मिक दुर्ग में प्रवेश कर रही थी। चारदीवारी से घिरने के कारण हवा गन्दी हो गई थी। पानी सड़ गया था, अन्न–कष्ट के कारण दुर्ग–निवासियों में फूट पड़ गई थी। दुर्ग की दशा को यदि संक्षेप में कहना हो तो हम कहेंगे कि भारत के निज धर्म **हिन्दू धर्म को, रूढ़ि और तुच्छ भेदों के रोग लगे हुए थे।** एक ओर बन्धन और रीति–रिवाज का ज़ोर तथा **दूसरी ओर तुच्छ भेदों के कारण एकता का नाश– ये दो रोग थे,** जिनसे भारत का धर्मरूपी शरीर पीड़ित हो रहा था। चुपचाप ईसाइयत के कीटाणु हवा और पानी के साथ उस शरीर में प्रवेश कर रहे थे। ब्राह्मसमाज ने इस दिशा का अनुभव तो किया परन्तु रोकने का जो यत्न किया, वह यह था कि ईसाइयत के कीटाणुओं से युक्त जल को कुछ स्वादु रूप दे दिया। इस उपचार से रोग दूर होगा या नहीं, कीटाणुओं से युक्त जल शरीर में प्रविष्ट होने से रुकेगा या नहीं, इन प्रश्नों का उत्तर हम नहीं देंगे क्योंकि इतिहास दे चुका है।

यह दशा थी जब दयानन्द ने गुरु से विदाई ली। उसने इस दशा के सुधार का क्या उद्योग किया, यह अलग विषय है।

**'आर्यसमाज का इतिहास, प्रथम–भाग' से साभार**

# अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन वर्तमान युग की अत्यावश्यक प्रासंगिकता

● ओम् प्रकाश आर्य

रोहिणी दिल्ली में दिनांक, 31 अक्टूबर व 1, 2 नवम्बर को चार दिवसीय अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन आयोजित होने जा रहा है जिसमें लगभग 30 देशों के आर्य अपनी उपस्थिति से **'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'** की प्रासंगिकता का प्रतिनिधित्व करेंगे और इस धरती को श्रेष्ठ मानवों से विभूषित करने में अपना मुख्य योगदान निर्वहन करने का सत्संकल्प भी लेंगे। महर्षि दयानन्द सरस्वती की 200वीं जयन्ती एवं आर्य समाज स्थापना के 150 वें वर्ष के उपलक्ष्य में आयोजित होने वाला यह आर्य महासम्मेलन पूरे विश्व के लिए महती प्रेरणा का स्रोत सिद्ध हो, ऐसा हम आर्यों को प्रयत्न करना है। इस सम्मेलन को पूरा विश्व देखकर वेदों का शंखनाद सुनने के लिए लालायित हो ऐसी भावना होकर आर्यों को जाना है, क्योंकि सारा जगत् आज अवैदिक विचारों की मलिन धारा में डूब–उतरा रहा है, कहीं शान्ति नहीं है। जैसे आज अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस अखिल विश्व मनाता है, उसी प्रकार **आर्यसमाज स्थापना दिवस भी पूरा विश्व मनाए, ऐसा प्रभाव आर्यों को डालना पड़ेगा। यह पृथ्वी आर्यों को ही पुकार रही है अन्य किसी को यह बात अपनी अन्तरात्मा से सुन सकते हैं।** उसी की परिणति आगामी अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन – 2025 का होगा।

अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन क्यों आवश्यक है? यह वैज्ञानिक युग आज एक विशाल कुटुम्ब के रूप में परिणत हो गया है। परिवार में सुख–शान्ति हो तो अच्छा लगता है, यदि उसमें कलह, लड़ाई–झगड़ा, ईर्ष्या–द्वेष, मनमुटाव, स्वार्थपरता, अहंकार, वैमनस्यता हो तो वह परिवार नरक का रूप धारण कर लेता है, फिर उसमें कोई आसुरी प्रवृत्ति का समावेश हो तो वह और जटिल समस्या का जाल–जंजाल सिद्ध हो जाता है। परमपिता परमात्मा ने यह भूमि आर्यों को दी है। यहाँ आर्यों का ही साम्राज्य होना चाहिए। इस दृष्टि से पूरी धरती पर एक दृष्टि डालकर देखिए तो विदित हो जाएगा कि आज मानव ही मानव के लिए खतरा बना हुआ है। कहीं एक देश दूसरे देश को मिटाने पर आमादा है, कहीं एक समुदाय–सम्प्रदाय पूरी धरती को अपने अधिकार में लेना चाहता है। कहीं एक वर्ग अन्य वर्ग को मारकर जन्नत प्राप्त करना चाहता है। कहीं जीव को तड़पाकर मारना धर्म माना जा रहा है, कहीं निर्धन, ज़रुरतमंद को लालच में फँसाकर अपने जाल में फँसाया जा रहा है, कहीं दुनिया को बनानेवाले परमेश्वर को ही मूर्त रूप बनाकर मानव उसी को सर्वस्व समर्पण करने को तैयार है। कहीं अधर्म को ही अज्ञानता में धर्म मानकर अपनाकर अन्धश्रद्धा में बहा जा रहा है। सर्वत्र अवैदिक विचारों का बोलबाला है। मीडिया भी उसी अवैदिक विचारों का दिन–रात प्रचार करने में लगा हुआ है। क्या–क्या बताया जाए, भूत–प्रेत की शंका अभी भी है। शुभ मुहूर्त का चक्कर बड़े–बड़े डिग्रीधारी को नचा रहा है। मंगल तक यान पहुँचने के बाद भी मनुष्य मंगला–मंगली की भावना नहीं छोड़ पा रहा है। जन्मकुंडली, दिशाशूल, मृतक के नाम पर कर्मकांड, जड़पूजा, आकाशीय बहुदेवता की मान्यता, जादू–टोना–टोटका आदि आज भी लोगों को गुमराह कर रहे हैं। ढोंग–पाखंड बढ़ा ही है घटा नहीं। रोज एक भगवान और एक देवता गली–मुहल्ले में जन्म ले रहा है। यहाँ तक कि मनुष्य ने अपने को, साक्षात् ईश्वर बना लिया है और कामनाएँ पूरी कर रहा है। प्राकृतिक घटनाओं को चमत्कार मानकर उसी की उपासना करने लग जाता है।

भारत ही नहीं, अपितु अवैदिक विचार हर देश में मिल जाएँगे। अन्धविश्वास और पाखंड भी मिलेंगे। इन सबका एकमात्र कारण वेदों की विचारधारा से दूर हो जाना। जैसे–जैसे संसार वेदों से दूर होता गया, वैसे–वैसे अज्ञान अन्धकार भी बढ़ता गया। वेदों से इसी दूरी ने आसुरी प्रवृत्तियों को जन्म दिया। स्थिति यह है कि छोटे–छोटे बच्चों को मारकाट, हिंसा, क्रूरता का पाठ पढ़ाया जाता है। वही बच्चा आगे चलकर उपद्रव और अशान्ति का कारण बनकर पूरे विश्व के लिए एक बड़ी समस्या बन जाता है। वह मौत से भी नहीं डरता है, क्योंकि उसे वैसे ही पाठ पढ़ाया गया है। जब तक बच्चा वैदिक शिक्षा नहीं पाएगा तब तक उसका विचार भी उज्ज्वल नहीं होगा।

बढ़ता हुआ भौतिकवाद और पर्यावरण की समस्या मानव को चैन से नहीं रहने देगी। संस्कारहीनता और नैतिक मूल्यों का अभाव मानव को राक्षस बनाएगा। महाशक्तियों के टकराने से धरती का ही विनाश होगा। प्रकृति के साथ छेड़छाड़ प्राकृतिक आपदा को जन्म देगा। संहारक अस्त्र–शस्त्र संहार ही करेंगे सृजन नहीं। यदि संहारक बुद्धि को सर्जक बुद्धि में बदल दिया जाए तो धरती का रूप ही कुछ और होगा। यह कार्य केवल और केवल वेद ही कर सकता है। उसी में यह सामर्थ्य है। **इसीलिए विश्व को वेदों की ओर लौटने का आह्वान यह अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन कर रहा है। इस सम्मेलन में आनेवाला हर आर्य अपने को एक मशाल समझे। महर्षि दयानन्द के मिशन को आगे बढ़ाने में अपना अप्रतिम योगदान दे। यह महासम्मेलन आर्यों का महाकुम्भ है। इस महाकुम्भ की ज्ञानगंगा में स्नान कर अपने जीवन को सार्थक बनाएँ। हमारा यह सांगठनिक प्रदर्शन है। हमारी एकता, अखंडता सार्वभौमिकता, वेदप्रियता, वेदप्रचार, मेलजोल, परस्पर दर्शन का एक अनूठा संगम है। यहाँ आकर हम अपनी स्थिति और आर्य समाज के आर्यों की संख्या का भी आकलन कर सकेंगे और आगामी योजना को नया रूप देने में सफल होंगे।** हमें बैठना नहीं है, चुनौतियाँ बहुत सी हैं, उनका मुकाबला करते हुए आर्य समाज को विश्वपटल पर लाने की आवश्यकता है। अवैदिक विचारों के प्रवाह में अपने को अटल शिला के समान बनना पड़ेगा, तभी कुछ कर सकेंगे। 99 प्रतिशत अवैदिक विचार छाए हुए हैं। ऐसी स्थिति में सत्यार्थ प्रकाश और वेद को हाथ में लेकर गली–मुहल्ले में सर्वत्र घूमना होगा। चारों ओर आसुरी प्रवृत्तियों का जाल बिछा हुआ है उस जाल में लोगों को फँसाने के षड़यंत्र चल रहे हैं। हमें जागरूक और सावधान होकर कार्य करना होगा।

आज के परिप्रेक्ष्य में अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलनों की महती आवश्यकता है। वेदमाता धरती के कोने–कोने में बसे लोगों को अपना सन्देश देना चाहती है, अपना ज्ञान लुटाना चाहती है। इस दृष्टि से यह महासम्मेलन मानवमात्र के लिए प्रेरणादायक है। हम आर्य विश्व के कोने–कोने में आर्यसमाज की विचारधारा को पहुँचा दें जिससे दुनिया को पता चले कि आर्यसमाज मानव को मानव बनाने में सक्रिय भूमिका निभाता है। यह श्रेष्ठ लोगों का संगठन है। विश्व को अपना बृहद् परिवार मानता है। यही अवसर है वैश्विक आर्य चिन्तन का।

**आर्यसमाज रावतभाटा वाया कोटा**
**(राजस्थान) 323307**

---

☞ पृष्ठ 03 का शेष

## तत्त्वज्ञान

चले जा रहे हैं ? इसका कारण यही प्रतीत होता है कि जीव ने दुःखों के सर्वथा नाश का यत्न नहीं किया; केवल दुःखों को टालने की बात है। इसीलिए 'सांख्य दर्शन' में मुनि ने कहा :

**दुःखत्रयाभिघाताज्ज्ञिासा तदपघातहेतौ।**
**दृष्टे साऽपार्था**
**चेन्नैकान्तात्यन्ततोऽभावाद्।। 1।।**

'अन्तःकरण में होनेवाले तीन प्रकार के दुःखों के साथ आत्मा का प्रतिकूलतारूपी सम्बन्ध है, अर्थात् आत्मा इन दुःखों को चाहता नहीं, इसलिये इन दुःखों का नाश करने के लिए विचारवान् पुरुषों को जिज्ञासा होती है कि इनके नाश करने के कौन–से साधन हैं। यद्यपि दृष्ट उपायों से भी दुःखों का नाश होता है, तथापि इनसे अत्यन्त नाश नहीं होता। अतएव ऐसा उपाय खोजना चाहिए, जिससे इन दुःखों का सर्वथा और नियम से नाश हो जाए।'

### सारे शास्त्रों का सार

सारे ही शास्त्रों और सारे ही अनुभवी महानुभावों ने दुःखों के अत्यन्त नाश और सर्वदा के लिए आनन्द ही में मग्न रहने का एक ही साधन बतलाया है और वह है तत्त्वज्ञान।

### तत्त्वज्ञान

तत्त्वज्ञान के बिना इस उद्देश्य तक पहुँचना असम्भव है।

गौतम मुनि के दर्शन का सार यह है कि जीव को दुःख मिथ्या ज्ञान से होता है। मिथ्या ज्ञान से दोष (राग–द्वेष), दोष से प्रवृत्ति (सकाम कर्म करने की इच्छा), प्रवृत्ति से जन्म और जन्म से दुःख उत्पन्न हो जाते हैं। मिथ्या ज्ञान का जब तक नाश नहीं होता, दुःख भी तब तक नहीं जा सकते। गौतम मुनि कहते हैं कि मिथ्या ज्ञान का नाश तत्त्वज्ञान ही से हो सकता है। इनके मत में 16 पदार्थों का तत्त्वज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। कणाद मुनि के मत में पदार्थ 6 हैं। इन पदार्थों के तत्त्वों का जब तक यथार्थ ज्ञान नहीं होता तब तक दुःखों की प्रात्यन्तिक निवृत्ति नहीं होती।

*क्रमशः*

# पत्र/कविता

## कृष्ण

धर्म, दर्शन, संस्कृति की वह अमर जागीर था,
कृष्ण भारतवर्ष की जागी हुई तकदीर था।

दौड़ नंगे पग सुदामा से मिला दिल खोलकर,
घृणा के वातावरण में प्रेम की जंजीर था।

सत्य की खातिरे जिया वो सत्य की खातिर मरा,
सत्य का था वो दधीचि हर हृदय की पीर था।

देवता, योगी, यती, नेता कहूं या क्या कहूं,
लोग मानें या न मानें कर्म की तस्वीर था।

कंस से अन्यायियों को दंड देने के लिए,
ठीक कहता हूं कन्हैया न्याय की शमशीर था।

दूरदर्शी था वो इतना शब्द भी असमर्थ हैं,
हार जाने के क्षणों में जीत की तदबीर था।

गोपियों के वस्त्र उसने थे चुराये, झूठ है,
असल में कान्हा 'मनीषी' द्रौपदी का चीर था।

**प्रो. डॉ सारस्वत मोहन 'मनीषी'**
**डी–801, बैस्टेक पार्क व्यू संस्कृति एपार्टमेंट, सैक्टर –92, नया गुरुग्राम**
**हरियाणा–122505**
**मो. 9810835335**

# सत्य सनातन वैदिक धर्म के ग्रन्थों में पैगम्बर और इस्लाम ?

पिछले कुछ सालों से एक झूठ फैलाया जा रहा है कि सत्य सनातन वैदिक धर्म के ग्रन्थों में पैगम्बर और इस्लाम के बारे में लिखा गया है, इस तरह की गप्प को जाकिर नायक ने बहुत अधिक प्रचारित किया. लगभग 10 किताबें इस विषय पर मुस्लिम संस्थाओं ने छापी हैं। वास्तव में यह कोशिश नई नहीं है। बहुत साल पहले भी यह छल कपट किया जा चुका है। उसका विवरण पढ़ें–

जिन दिनों महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय संशोधित संस्करण के सम्पादन–प्रकाशन कार्य में व्यस्त थे, उन दिनों कलकत्ता से निकलने वाले 'भारत मित्र' नामक एक पत्र के श्रावण 6 गुरुवार वि. सं. 1940 के अंक में छपा था कि मुसलमानों के मजहब का मूल अथर्ववेद में है और इस सम्बन्ध में अल्लोपनिषद् का उल्लेख भी किया गया था।

यह समाचार पढ़कर महर्षि ने उक्त पत्र के सम्पादक को एक पत्र लिखा। महर्षि का यह पत्र 'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन' में पढ़ा जा सकता है (पृ. 447–448, द्वितीय संस्करण)।

इसीलिए सत्यार्थ प्रकाश के कुरआन की समीक्षा विषयक 14वें समुल्लास के अन्त में महर्षि ने अल्लोपनिषद् की वास्तविकता प्रकट करने के लिए अपने निम्नलिखित विचार व्यक्त किए हैं –

"अब एक बात यह शेष है कि बहुत से मुसलमान ऐसा कहा करते और लिखा वा छपवाया करते हैं {**यह संकेत भारत मित्र के उपर्युक्त लेख की ओर है**} कि हमारे मजहब की बात **(अस्माल्लां और इल्ले)** अर्बी और अथर्ववेद में लिखी है। इसका यह उत्तर है कि अथर्ववेद में इस बात का नाम निशान भी नहीं है।

**(प्रश्न)** क्या तुमने सब अथर्ववेद देखा है? यदि देखा है तो अल्लोपनिषद् देखो। यह साक्षात् उसमें लिखी है। फिर क्यों कहते हो कि अथर्ववेद में मुसलमानों का नाम निशान भी नहीं है? **'अथाल्लोपनिषदं व्याख्यास्यामः... इत्यल्लोपनिषत् समाप्ता।'** जो इसमें प्रत्यक्ष मुहम्मद साहब रसूल लिखा है इससे सिद्ध होता है कि मुसलमानों का मत वेदमूलक है।

**(उत्तर)** यदि तुमने अथर्ववेद न देखा हो तो हमारे पास आओ, आदि से पूर्त्ति तक देखो अथवा जिस किसी अथर्ववेदी के पास बीस काण्डयुक्त मन्त्रसंहिता अथर्ववेद (की हो उस) को देख लो। कहीं तुम्हारे पैगम्बर साहब का नाम वा मत का निशान न देखोगे। और जो यह अल्लोपनिषद् है वह न अथर्ववेद में, न उसके गोपथ ब्राह्मण वा किसी शाखा में है। यह तो अकबरशाह के समय में अनुमान है कि किसी ने बनाई है। इस का बनाने वाला कुछ अर्बी और कुछ संस्कृत भी पढ़ा हुआ दीखता है क्योंकि इसमें अरबी और संस्कृत के पद लिखे हुए दीखते हैं। देखो! **(अस्माल्लां इल्ले मित्रावरुणा दिव्यानि धत्ते)** इत्यादि में जो कि दश अंक में लिखा है, जैसे–इस में संस्कृत पद लिखे हैं वैसे ही सर्वत्र देखने में आने से किसी संस्कृत और अर्बी के पढ़े हुए ने बनाई है। यदि इसका अर्थ देखा जाता है तो यह कृत्रिम अयुक्त वेद और व्याकरण रीति से विरुद्ध है। जैसी यह उपनिषद् बनाई है, वैसी बहुत–सी उपनिषदें मतमतान्तर वाले पक्षपातियों ने बना ली हैं। जैसी कि स्वरोपनिषद्, नृसिंहतापनी, रामतापनी, गोपालतापनी बहुत–सी बना ली हैं।

**(प्रश्न)** आज तक किसी ने ऐसा नहीं कहा, अब तुम कहते हो। हम तुम्हारी बात कैसे मानें?

**(उत्तर)** तुम्हारे मानने वा न मानने से हमारी बात झूठ नहीं हो सकती है। जिस प्रकार से मैंने इसको अयुक्त ठहराई है उसी प्रकार से जब तुम अथर्ववेद, गोपथ वा इसकी शाखाओं से प्राचीन लिखित पुस्तकों में जैसे का तैसा लेख दिखलाओ और अर्थसंगति से भी शुद्ध करो तब तो सप्रमाण हो सकता है।"

स्वामी विद्यानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश का 'सत्यार्थ भास्कर' नामक दो भागों में विस्तृत भाष्य लिखा है। उसमें उन्होंने अल्लोपनिषद् के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें लिखीं हैं–

**अल्लोपनिषद्** : इस विषय में अभी तक भी भ्रान्ति बनी हुई है। सन् 1947 के मई मास में महात्मा गाँधी दिल्ली में ठहरे हुए थे। उनकी प्रार्थना में वेद, उपनिषद्, गीता, बाइबल आदि के अंश नियमित रूप से बोले जाते थे। कुछ लोगों को यह अच्छा नहीं लगता था। गाँधीजी तक भी यह बात पहुँची। तब एक दिन उन्होंने प्रार्थनोपरान्त प्रवचन में कहा–

'हिन्दू लोग मेरी प्रार्थना में कुरान शरीफ की आयतों के पढ़े जाने पर क्यों आपत्ति करते हैं, जबकि उनकी उपनिषदों में एक अल्लोपनिषद् भी है।'

इस पर मैंने गाँधीजी को भेजे अपने एक पत्र में लिखा –

'आपका यह कहना ठीक नहीं है कि हिन्दुओं द्वारा मान्य उपनिषदों में एक अल्लोपनिषद् भी है। मेरे पास वर्तमान में उपलब्ध सभी 108 उपनिषदें हैं। उनमें अल्लोपनिषद् नाम की कोई उपनिषद् नहीं है। उसका अता–पता देने की कृपा करें।'

गाँधीजी ने उत्तर में लिखा–

'मुझे मेरे एक मित्र ने बताया था कि उसने किसी पुस्तक की भूमिका में लेखक द्वारा उद्धृत प्रमाण के आधार पर ऐसा कहा था।'

मैंने प्रत्युत्तर में गाँधीजी को लिखा कि –

'आप जैसे महापुरुष को, जिनकी वाणी या लेखनी से निकला हुआ एक–एक शब्द महत्त्वपूर्ण होता है, सुनी–सुनाई बातों के आधार पर ऐसा वक्तव्य नहीं देना चाहिए। अब मैं आपको अल्लोपनिषद् की जानकारी देता हूँ। आप जानते हैं कि मुगल सम्राट् अकबर ने अपनी लोकप्रियता बढ़ाने के लिए ***'दीने इलाही'*** के नाम से एक मत चलाया था। प्रत्येक मत का एक धर्मग्रन्थ भी होता है। अल्लोपनिषद् अकबर द्वारा बनवाये गये ऐसे ही धर्म ग्रन्थ का नाम है। अरबी और संस्कृत मिश्रित भाषा में रचित इस ग्रन्थ में अल्ला, ब्रह्म, ऋषि, मुहम्मद, अकबर, अथर्व, उपनिषद्, यज्ञ, अन्तरिक्ष, माया आदि शब्दों को देखकर आपाततः इसके हिन्दुओं और मुसलमानों में समानरूप से मान्य धर्मग्रन्थ होने का भ्रम हो सकता है, किन्तु वास्तव में इसका वेद, उपनिषद् आदि से कोई सम्बन्ध नहीं है।' (सत्यार्थ–भास्कर, भाग–2, पृ. 795–6)

**डॉ. विवेक**
**मो.9310679090**

**********

# डी.ए.वी. चम्बा में श्रावणी पर्व, वैदिक चेतना शिविर का भव्य समापन

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल चंबा का प्रांगण 15 अगस्त 2025 को देशभक्ति, संस्कृति और अध्यात्म के अद्भुत संगम से गूँज उठा। इस दिन श्रावणी पर्व, पूर्णाहुति यज्ञ एवं वैदिक चेतना शिविर के समापन के साथ–साथ स्वतंत्रता दिवस का भव्य आयोजन बड़े ही उत्साह और श्रद्धा के साथ संपन्न हुआ।

इस अवसर पर विशेष अतिथि के रूप में स्वामी चक्रांश जी, श्री सूरत राम शास्त्री जी, आचार्य महावीर जी, उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सरस्वती जी, श्री घनश्याम शर्मा जी धर्मपत्नी सहित विद्यालय में पधारे। तिरंगा झंडा फहराकर कर किया गया। तत्पश्चात गायत्री मंत्र एवं वैदिक मंत्रोच्चारण से यज्ञ संपन्न हुआ। वैदिक चेतना शिविर के दौरान आचार्य महावीर जी ने वैदिक ज्ञान के महत्त्व और उसके जीवन में अनुप्रयोग पर प्रकाश डालते हुए छात्रों को प्रेरित किया। उन्होंने कहा कि वैदिक मूल्य और देशभक्ति की भावना का संगम ही छात्रों के सर्वांगीण विकास का आधार है। सुंदर भजनों और मंत्रोच्चारण ने पूरे वातावरण को आध्यात्मिक और प्रेरणादायक बना दिया।

विद्यार्थियों ने जोशीले देशभक्ति गीत, सांस्कृतिक नृत्य और योग प्रदर्शन प्रस्तुत किए। तिरंगा लहराते हुए विद्यालय परिसर देशभक्ति के रंगों में रंग उठा।

सांस्कृतिक प्रस्तुतियों, भजन–गायन एवं योग प्रदर्शन में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले छात्रों को पुरस्कृत किया गया।

प्राचार्य श्री अशोक कुमार गुलेरिया जी ने कहा कि "श्रावणी पर्व हमें अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ता है, वहीं स्वतंत्रता दिवस हमें देश के लिए त्याग और बलिदान का संदेश देता है। इन दोनों पर्वों का संगम छात्रों के जीवन में विशेष ऊर्जा और प्रेरणा भरता है।"

कार्यक्रम के अंत में शांतिपाठ के साथ प्रीति भोज का आयोजन किया गया।

# डी.ए.वी. फिल्लौर में पर्यावरण जागरूकता कार्यक्रम

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल फिल्लौर में वृक्षारोपण और पर्यावरण जागरूकता कार्यक्रम का आयोजन किया गया, जिसने छात्रों और शिक्षकों के भीतर एक नई ऊर्जा का संचार किया। कार्यक्रम की शुरुआत एक भावपूर्ण नृत्य–नाटिका से हुई, जिसने सभी

दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया। इस प्रस्तुति ने पेड़ों के महत्त्व और वर्तमान पर्यावरणीय चुनौतियों पर एक सशक्त संदेश दिया। छात्रों ने पेड़ों पर सुंदर कविताएँ सुनाईं, जिनसे श्रोतागण प्रकृति से और अधिक भावनात्मक रूप से जुड़ पाए।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डीएफओ (जिला जालंधर) श्री जरनैल सिंह भाट ने सभा अपने प्रेरणादायक संबोधन से सभी छात्रों को प्रोत्साहित किया। उन्होंने ***'कम करो, दोबारा इस्तेमाल करो, पुनर्चक्रण करो'*** के मूलमंत्र पर ज़ोर दिया और एकल–उपयोग वाले प्लास्टिक से दूर रहने की अपील की। उन्होंने यह भी समझाया कि सिर्फ पेड़ लगाना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि उनकी देखभाल और पोषण करना भी उतना ही आवश्यक है। यह संबोधन जीवन की एक महत्त्वपूर्ण सीख थी, जिसने हमें रोजमर्रा की जिंदगी में पर्यावरण की रक्षा करने के सरल तरीके सिखाए।

प्रधानाचार्य, डॉ. योगेश गंभीर ने कहा कि डीएवी सदैव हरित भविष्य के लिए प्रयास करने हेतु प्रेरित करता रहता है, हर विद्यार्थी को अपने जन्मदिन पर पौधा लगाकर उसकी देखभाल करनी चाहिए।

# आर्यसमाज (अनारकली) का साप्ताहिक सत्संग

आर्यसमाज (अनारकली) का साप्ताहिक सत्संग हर रविवार की तरह इस बार भी 03–08–2025 को आयोजित हुआ जिसमें प्रातः 9 बजे वृहद्यज्ञ, ब्रह्मयज्ञ एवं योग व ध्यान आर्यसमाज के धर्माचार्य पं. घनश्याम आर्य सिद्धान्ताचार्य ने सम्पन्न करवाये।

इस रविवार डी.ए.वी. सैन्टेनरी पब्लिक स्कूल, पश्चिम इन्कलेव दिल्ली के संगीताचार्य श्री मणी कुमार झा के नेतृत्व में छात्र–छात्राओं ने अति सुन्दर प्रभुभक्ति के भजनों से सबको आह्लादित कर दिया। स्कूल के संस्कृत शिक्षक पं. योगेन्द्र शर्मा का ***'सत्संगति'*** विषय पर प्रवचन हुआ। श्री पदम सिंह आर्य का देशभक्ति पर कविता पाठ हुआ।

आर्यसमाज (अनारकली) की सहमन्त्री श्रीमती स्नेह मोहन का दिनांक 2 अगस्त 2025 की रात्रि में देहावसान हो गया, इनकी स्मृति में सत्संग के पश्चात् 2 मिनट का मौन रहकर उनकी आत्मा के लिए प्रार्थना की गई।

सत्संग में कार्यकारी प्रधान श्री अजय सूरी, और स्कूल से आये संगीताचार्य, श्री मणी कुमार झा, श्री अर्जुन गुरुंग, डॉ. लता विज, सुश्री याचना का पुष्पहार पहनाकर स्वागत किया गया।

मन्त्री श्री अशोक कुमार अदलखा ने सत्संग में आये सभी सत्संग प्रेमियों का धन्यवाद किया। शान्ति पाठ एवं प्रसाद वितरण के साथ सत्संग समाप्त हुआ।

आर्य समाज 150 मानव सेवा के स्वर्णिम वर्ष 1875 - 2025

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2024-25-26
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2024-25-26
Posted at L.P.C.(Delhi RMS)D110006 ON Wednesday & Thursday, 2025

# डी.ए.वी. बी.आर.एस. नगर लुधियाना में 'वेद सप्ताह' कार्यक्रम

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, बी. आर. एस. नगर, लुधियाना में 4 अगस्त से 9 अगस्त, 2025 तक वेद प्रचार सप्ताह बड़ी श्रद्धा और उत्साह के साथ मनाया।

इस उत्सव का उद्देश्य छात्रों को वेदों के कालातीत ज्ञान से जोड़ना और उनमें मजबूत नैतिक मूल्यों का संचार करना था। हर दिन 'चतुर्वेद–शतकम्' आधारित यज्ञ और मधुर भजनों का गायन हुआ।

मंत्रोच्चारण, वैदिक शिक्षाओं पर पत्र–वाचन, आर्यसमाज के नियम, पात्र–मंचन, कविता गायन, वैदिक प्रश्नोत्तरी तथा पोस्टर मेकिंग आदि गतिविधियों का आयोजन भी किया गया। इसके अतिरिक्त 'आर्याभिविनय' के ज्ञानवर्धक व्याख्यान दिए गए।

डॉ. प्रमोद कुमार योगार्थी ने *'आभासी दुनिया में उलझी युवा पीढ़ी और नैतिक मूल्यों की उपयोगिता'* पर विद्यार्थियों के साथ अपने विचार सांझे किए।

द्वितीय सत्र में योगार्थी जी ने अध्यापकों के साथ ***'शिक्षण में वैदिक विचारधारा की प्रासंगिकता'*** पर विचार प्रस्तुत किए।

कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण 'प्रकृति और संस्कृति की रक्षा वेदों के साथ एवं नशा उन्मूलन' पर आधारित जागरूकता रैली थी। यह रैली विद्यालय से प्रारंभ होकर बी. आर. एस. नगर' के विभिन्न ब्लाकों से होकर सराभा नगर पुलिस स्टेशन तक गई। सराभा नगर पुलिस स्टेशन थानाध्यक्ष व अन्य पुलिस अधिकारियों ने रैली का हार्दिक स्वागत किया। परिसर में पौधारोपण भी किया गया।

प्राचार्या श्रीमती जे. के. सिद्धू ने कहा कि मजबूत नैतिक मूल्यों, आत्म–अनुशासन और सांस्कृतिक गौरव को बढ़ावा देना ही ऐसे आयोजनों का मुख्य उद्देश्य है।

# हंसराज पब्लिक स्कूल सेक्टर 6, पंचकूला में स्वतंत्रता सप्ताह

हंसराज पब्लिक स्कूल, सेक्टर 6, पंचकूला में 8 अगस्त से 15 अगस्त 2025 तक स्वतंत्रता सप्ताह बड़े उत्साह और देशभक्ति की भावना के साथ मनाया गया।

सप्ताह भर के आयोजन में प्रत्येक सुबह विशेष सभा आयोजित की गई, जिसमें विद्यार्थियों ने देशभक्ति गीत, ओजपूर्ण कविताएं और प्रेरणादायक भाषण प्रस्तुत किए। इन प्रस्तुतियों ने सभी को स्वतंत्रता संग्राम के महान बलिदानों और मूल्यों की याद दिलाईं।

समापन समारोह की शुरुआत प्राचार्या श्रीमती जया भारद्वाज द्वारा तिरंगा फहराने से हुईं। राष्ट्रीय गान के मधुर गायन के बाद जूनियर विंग के विद्यार्थियों ने रंगारंग नृत्य और सांस्कृतिक प्रस्तुतियों से देशभक्ति का अद्भुत वातावरण बनाया। 'भारत की औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्रता तक की यात्रा' पर आधारित नाट्य मंचन को दर्शकों ने सराहा।

संबोधन में प्राचार्या ने कहा, "स्वतंत्रता दिवस केवल अतीत को याद करने का अवसर नहीं है, बल्कि भविष्य को नए दृष्टिकोण से गढ़ने का भी समय है।"

कार्यक्रम का समापन पूरे विद्यालय द्वारा सामूहिक देशभक्ति गीतों के साथ किया गया। "जय हिंद" के गगनभेदी नारों ने पूरे वातावरण को देशभक्ति की ऊर्जा से भर दिया।

# डी.ए.वी. एन.आई.टी. कैम्पस आदित्यपुर, जमशेदपुर में वेद प्रचार सप्ताह

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, एन. आई. टी. कैम्पस आदित्यपुर, जमशेदपुर, झारखंड में वेद प्रचार सप्ताह का आयोजन बड़े धूमधाम से किया गया। इस अवसर पर विद्यालय की प्राचार्या सुश्री रेखा कुमारी जी मुख्य यजमान के रूप में उपस्थित रहीं। विद्यालय के छात्र–छात्राओं, शिक्षक–शिक्षिकाओं तथा शिक्षकेत्तर कर्मचारियों ने इस वेदप्रचार में बढ़ चढ़कर भाग लिया।

प्रतिदिन चतुर्वेद शतकम् पारायण महायज्ञ का आयोजन हुआ। महर्षि दयानंद द्वारा रचित आर्याभिविनय के मंत्रों की व्याख्या सभी श्रोताओं को सुनायी गई। प्रतिदिन छात्र छात्राओं के द्वारा वेद, यज्ञ और ईश्वर भक्ति से ओतप्रोत सामूहिक भजनों ने श्रोताओं का मन मोह लिया।

छात्र–छात्राओं द्वारा आर्यसमाज के नियमों की प्रस्तुति रोचक ढंग से की गईं। बच्चों के द्वारा प्रतिदिन भाषण, कवितापाठ एवं लघु नाटिका के द्वारा वैदिक महापुरुषों का जीवन दर्शाया गया।

प्राचार्या सुश्री रेखा कुमारी ने प्रतिदिन बच्चों को सम्बोधित करते हुए आर्यसमाज, डी.ए.वी तथा वेदों की महत्ता बताते हुए कहा कि हमें अपने जीवन में वैदिक मूल्यों को आत्मसात करना चाहिए तभी वेदप्रचार सप्ताह मनाना सार्थक होगा। शांतिपाठ के साथ वेदप्रचार सप्ताह सम्पन्न हुआ।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **फर्स्ट इम्प्रैशन कार्पोरेट सर्विसिज, (प्रा.) लि.,** ई.113–114, सैक्टर–63, नोएडा, उ.प्र.–201301 (दूरभाष : 120–4246315) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**